मानसिक शक्ति

THOUGHT POWER

का अविकल रूपान्तर

लेखक

श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

अनुवादक

श्री त्रि. न. आत्रेय

प्रकाशक

द डिवाइन लाइफ सोसायटी

पत्रालय : शिवानन्दनगर—२४९१९२

जिला : टिहरी-गढ़वाल, उत्तराखण्ड (हिमालय), भारत

मूल्य] २००८ [रु. ६०/-

प्रथम हिन्दी संस्करण : १९७३
द्वितीय हिन्दी संस्करण : १९७९
तृतीय हिन्दी संस्करण : १९८२
चतुर्थ हिन्दी संस्करण : १९८६
पंचम हिन्दी संस्करण : १९९१
षष्ठ हिन्दी संस्करण : १९९५
सप्तम हिन्दी संस्करण : २०००
अष्टम हिन्दी संस्करण : २००६
नवम हिन्दी संस्करण : २००८
(२,००० प्रतियाँ)

ISBN 81-7052-057-6
HS 98

'द डिवाइन लाइफ सोसायटी, शिवानन्दनगर' के लिए स्वामी विमलानन्द द्वारा प्रकाशित तथा उन्हीं के द्वारा 'योग-वेदान्त फारेस्ट एकाडेमी प्रेस, पो. शिवानन्दनगर—२४९१९२, जिला टिहरी-गढ़वाल, उत्तराखण्ड' में मुद्रित।

श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

(संक्षिप्त जीवन-चरित्र)

श्री स्वामी शिवानन्द ने ८ सितम्बर १८८७ को सन्त अप्पय दीक्षितार तथा अन्य अनेक सुप्रसिद्ध सन्तों और विद्वानों के प्रतिष्ठित कुल में जन्म लिया था। उनमें वेदान्त के अध्ययन तथा आदर्शों को समर्पित जीवन व्यतीत करने की एक जन्मजात प्रवृत्ति थी; साथ ही, उनमें सबकी सेवा करने की सहज ललक तथा समस्त मानव-जाति के प्रति ऐक्य का अन्तर्जात भाव भी था।

अपने सेवानुराग के कारण वह चिकित्सीय वृत्ति की ओर आकर्षित हुए। जहाँ उन्होंने अपनी सेवा की सर्वाधिक आवश्यकता समझी, वहाँ वह शीघ्र ही एक अप्रतिरोध्य आकर्षणवश पहुँच गये। मलय देश उनकी सेवा का क्षेत्र बना। इससे पूर्व वह एक स्वास्थ्य-पत्रिका का सम्पादन कर रहे थे तथा उन्होंने स्वास्थ्य-समस्याओं से सम्बन्धित अनेकानेक लेख लिखे थे। उन्होंने यह अनुभव किया कि व्यक्तियों को यथार्थ ज्ञान की सर्वाधिक आवश्यकता थी। और, ऐसे ज्ञान के प्रचार को उन्होंने अपने मिशन के रूप में स्वीकार कर लिया।

यह एक ईश्वरीय विधान था तथा मानव-जाति पर ईश्वरीय कृपा थी कि शरीर-मन के उस चिकित्सक ने मानव-आत्मापरक सेवा—आध्यात्मिक सेवा—करने के लिए पात्रता अर्जित करने हेतु चिकित्सीय वृत्ति का त्याग करके वैराग्यमय जीवन अपना लिया। इस प्रकार का जीवन व्यतीत करने के उद्देश्य से वह सन् १९२४ में ऋषिकेश आ गये। वहाँ उन्होंने गहन तपश्चर्या की तथा वह एक महान् योगी, सन्त, ज्ञानी और जीवन्मुक्त महापुरुष के रूप में प्रसिद्ध हुए।

सन् १९३२ में स्वामी शिवानन्द जी ने शिवानन्द आश्रम के कार्यों का श्रीगणेश किया। सन् १९३६ में दिव्य जीवन संघ की स्थापना हुई। सन् १९४८ में योग-वेदान्त फारेस्ट एकाडेमी के कार्यक्रम प्रारम्भ किये गये। इन सबका उद्देश्य था—आध्यात्मिक ज्ञान का प्रचार करना तथा व्यक्तियों को योग और वेदान्त में प्रशिक्षण देना। सन् १९५० में स्वामी जी ने भारत तथा सीलोन की यात्रा की। सन् १९५३ में स्वामी जी ने 'विश्व धर्म संसद' का संयोजन किया। स्वामी जी ३०० से अधिक पुस्तकों के लेखक हैं। संसार-भर में उनके शिष्य हैं—जिनमें सभी राष्ट्रों के निवासी तथा सभी धर्मों और मतों के अनुयायी सम्मिलित हैं। स्वामी जी की पुस्तकों का अध्ययन करना परम प्रज्ञामृत का पान करने के समान है। १४ जुलाई १९६३ को स्वामी जी महासमाधि में लीन हुए।

आमुख

इस शिक्षाप्रद पुस्तक में जीवन के रूपान्तरकारी मूल्य समाहित हैं। ऐसा कोई भी व्यक्ति न होगा जो इस पुस्तक को पढ़ कर अपनी वैयक्तिक प्रकृति में परिवर्तन तथा आचार और शील में रूपान्तरण लाना न चाहे। पर्याप्त विचारपूर्ण निर्णय तथा विश्वास के आधार पर हम यह बलपूर्वक कह सकते हैं कि इस पुस्तक का परिशीलन करने वाला ऐसा कोई भी व्यक्ति न होगा जो अपने संकल्प को एक ऐसी शक्ति के रूप में निर्माण करने की अपनी उत्सुकता का प्रतिरोध करने में असफल हो, जो कि उसके निजी जीवन तथा नियति में परिवर्तन लाती तथा उसे उन्नत बनाती है। यह पुस्तक ऐसे गर्भित मार्गदर्शनों से पूर्ण है जिनसे हम अपने व्यक्तित्व को अप्रतिहत प्रभावकारी तथा मोहक शक्ति में रूपान्तर कर सकते तथा जीवन को, अपने में प्रतिष्ठित दिव्य सत्य के, अपने पोषित दिव्य उल्लास के तथा अपनी सत्ता में सन्धृत दिव्य पूर्णता के महाकाव्य-प्रस्फुटन की अनेक भव्य कथाओं का रूप दे सकते हैं।

यह इस भाँति एक सरल, खरी तथा प्रेरणादायी पुस्तक है जो विचार-शक्ति के संवर्धन तथा परिपोषण के लिए अनेक विधियाँ प्रसारित करती है। यह ऐसी भी पुस्तक है जो हमें अनेक ऐसे उपयोगी सुझाव प्रस्तुत करती है जिनसे हम विचार तथा उसकी शक्ति के साम्राज्य से परे, मनसातीत अनुभव तथा भागवतीय चेतना के जगत् में पहुँचने में समक्ष बनते हैं।

सम्पूर्ण मानवता के प्रति अपने प्रेम से सहायता तथा प्रत्येक मनुष्य की सेवा के लिए अपनी अथक शक्ति के विवेक से आदेश प्राप्त कर शिवानन्द जी ने अपने को सभी प्रकार के व्यक्तियों के लिए, जीवन के सभी क्षेत्रों के लोगों के लिए अत्यधिक उपयोगी सिद्ध कर दिखाया तथा अपनी निजी बोधप्रद और आध्यात्मिक शैली में प्रचुर वैविध्यपूर्ण विषयों पर पुस्तकों का प्रणयन किया। समस्त भारत की आध्यात्मिक संस्कृति की भावना को अपने में समावेश कर शिवानन्द जी ने जीवन-बोधमयी पुस्तकों की शत-शत भेंटों की मानवता पर वृष्टि की। प्रस्तुत पुस्तक अपनी संस्तुति स्वयं करेगी तथा सामान्य जन एवं आध्यात्मिक व्यक्तियों के समुदाय—दोनों को ही अनेक प्रतिफल प्रदान करेगी। यह पुस्तक विशेषकर उन लोगों के लिए अत्यधिक मूल्यवान् सिद्ध होगी जो कि किसी धर्म-विशेष में विश्वास नहीं करते, जिन्होंने किसी ईश्वर के प्रेम से अपना मुँह नहीं मोड़ रखा है, जो किसी मत-मतान्तर की बातों को

अंगीकार नहीं करते, फिर भी अपने कार्यशील जगत् के परिसर में रहते हुए अधिकार, शुद्धता, शान्ति, समृद्धि, प्रगति, सुख तथा पूर्णता का जीवन यापन करने के लिए उत्सुक रहते हैं।

शिवानन्द जी ने इस पुस्तक में विचार-शक्ति के प्रगतिशील ज्ञान को असन्दिग्ध रूप से इन तीन भिन्न क्षेत्रों में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है :

१. उच्चतर विशिष्ट मनोविज्ञान का क्षेत्र : शिवानन्द जी यहाँ विचार की उस शक्ति के रूप में चर्चा करते हैं जो मुखाकृति को गढ़ती, चरित्र को सँवारती, भाग्य को बदलती तथा जीवन को सर्वतोमुखी सफल बनाती है।

२. पूर्ण विकसित परा-मनोविज्ञान : यह क्षेत्र इस पुस्तक में दूर-दूर तक विकीर्ण उन अनुच्छेदों तथा अध्यायों के अन्तर्गत है, जो इस तथ्य पर प्रकाश डालते हैं कि मानव-मन अनेक अधिसामान्य शक्तियों तथा कारकों का अधिष्ठान तथा केन्द्र है। शिवानन्द जी ने अपने पाठकों से उन शक्तियों के उन्मोचन के लिए तथा अपने समादेशाधिकार में रहने वाली विविध उच्चतर क्षमताओं को अपने बाह्य जीवन में प्रवर्ती करने का आग्रह करते हैं।

३. परा-अनुभूति का क्षेत्र : शिवानन्द जी जहाँ-कहीं भी विचार-मुक्ति के लिए कोई विधि निर्धारित करते हैं अथवा उस विषय की चर्चा करते हैं, वहाँ वह हमें दिव्यानुभूति के उस साम्राज्य में ले जाने का प्रयास कर रहे होते हैं जहाँ विचार विचार न रह कर असीम चेतना में विभाषित हो उठता है।

अस्तु, यह पुस्तक विचार के दृश्य जगत् में शिवानन्द जी को एक प्रकार से एक व्यावहारिक मानस-शास्त्री, भौतिकीयविद् तथा रसायनज्ञ और परा-मनोवैज्ञानिक तथा योगी के रूप में पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करती है और इस भाँति अपने भविष्य के निर्माण में, जीवन में अपनी सफलता की उपलब्धि में तथा विचारों के दक्ष-प्रयोग तथा उनमें सँजोयी अलौकिक शक्तियों को बलात् हस्तगत करने की शक्ति के अधिगमन में उनको साहाय्य प्रदान करती है। यह पुस्तक विचार-नियमन द्वारा शिष्टता एवं संस्कृति की प्राप्ति में स्वास्थ्यकर, रचनात्मक तथा प्रेरणादायी विचार-स्पन्दनों के उन्मोचन की अपनी क्षमता के उपयोग में, किसी महान् और भव्य कार्य-निष्पादन द्वारा सुख और शान्ति की उपलब्धि में तथा इस पार्थिव जगत् के सभी मानवों की चरम परिणति-रूप भगवत्साक्षात्कार की प्राप्ति में उनकी सहायक होगी।

विश्व-प्रार्थना

हे स्नेह और करुणा के आराध्य देव!
तुम्हें नमस्कार है, नमस्कार है।
तुम सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान् और सर्वज्ञ हो।
तुम सच्चिदानन्दघन हो।
तुम सबके अन्तर्वासी हो।

हमें उदारता, समदर्शिता और मन का समत्व प्रदान करो।
श्रद्धा, भक्ति और प्रज्ञा से कृतार्थ करो।
हमें आध्यात्मिक अन्त:शक्ति का वर दो,
जिससे हम वासनाओं का दमन कर मनोजय को प्राप्त हों।
हम अहंकार, काम, लोभ, घृणा, क्रोध और द्वेष से रहित हों।
हमारा हृदय दिव्य गुणों से परिपूरित करो।

हम सब नाम-रूपों में तुम्हारा दर्शन करें।
तुम्हारी अर्चना के ही रूप में इन नाम-रूपों की सेवा करें।
सदा तुम्हारा ही स्मरण करें।
सदा तुम्हारी ही महिमा का गान करें।
तुम्हारा ही कलिकल्मषहारी नाम हमारे अधर-पुट पर हो।
सदा हम तुममें ही निवास करें।

—स्वामी शिवानन्द

विषय-सूची

द्वितीय अध्याय

विचार-शक्ति : सिद्धान्त और गति-शक्ति

तृतीय अध्याय

विचार-शक्ति का मूल्य और उपयोग

चतुर्थ अध्याय

विचार-शक्ति के कार्य

पंचम अध्याय

विचार-शक्ति का विकास

षष्ठ अध्याय

विचार : उनके प्रकार तथा उन पर विजय

सप्तम अध्याय

विचार-नियमन के विधायक उपाय

अष्टम अध्याय

विचार-संस्कार के आदर्श

नवम अध्याय

विचार से विचार-संचरण

दशम अध्याय

विचार-शक्ति का शास्त्रीय ज्ञान

एकादश अध्याय

विचार-शक्ति और ईश्वर-साक्षात्कार

द्वादश अध्याय

विचार-शक्ति और नयी सभ्यता

मानसिक शक्ति

विचार-शक्ति : स्वरूप और दर्शन

१. विचार प्रकाश की गति से भी अधिक वेगवान् है

प्रकाश एक सेकेण्ड में १,८६,००० मील की गति से जाता है, किन्तु विचार की गति वस्तुतः कालातीत है।

'ईथर' (Ether) जो विद्युत्-प्रवाह का माध्यम है, काफी सूक्ष्म तत्त्व माना जाता है, किन्तु विचार उससे सूक्ष्मतर है। रेडियो के प्रसारण में हम देखते हैं, गायक कोलकाता में सुन्दर गायन प्रस्तुत कर रहा है और दिल्ली में आप अपने घर बैठे उस गायन को अपने रेडियो में तत्काल सुनते हैं। सारे समाचार बेतार के तार से प्राप्त होते रहते हैं।

इसी प्रकार आपका मन भी बेतार के तार के यन्त्र (Wireless Machine) के समान ही है। एक सन्त, जिसका चित्त शान्त, सन्तुलित, समंजस और अध्यात्म-तरंगों से युक्त है, अपने समाधान और शान्ति के विचारों को संसार में प्रसारित करता रहता है। वे विचार विद्युत् की कौंध से भी तीव्र गति से दशों दिशाओं में फैलते हैं, मनुष्यों के हृदय में प्रवेश करते हैं और उनमें भी उसी प्रकार समाधान और शान्ति के विचार उत्पन्न करते हैं। इसके विपरीत सांसारिक मनुष्य, जिसके मन में ईर्ष्या, द्वेष और प्रतीकार की भावनाएँ भरी हैं, विसंगत और दुष्ट विचारों को प्रसारित करता है और वे विचार कोटि-कोटि व्यक्तियों के मन में प्रवेश कर उन्हें आलोड़ित करते हैं और उसी प्रकार के द्वेषपूर्ण तथा विसंगत विचार उत्पन्न करते हैं।

२. विचार का वाहन

झील या तालाब के पानी में यदि एक कंकड़ फेंकें तो उससे अनेक तरंगें उत्पन्न होती हैं, जो उस केन्द्र से चारों ओर फैलती-फैलती किनारे से जा टकराती हैं।

दीपक जलाते हैं तो उसकी ज्योति से प्रकाश की किरणें सभी दिशाओं में फैलती हुई ईथर में कम्प की तरंगें उत्पन्न करती हैं।

इसी प्रकार जब मनुष्य के चित्त में भले या बुरे किसी भी प्रकार के विचार उठते हैं तो वे 'मनोभूमि' को कम्पित कर तरंगें उत्पन्न करते हैं, जो दूर-दूर तक सर्वत्र फैल जाती हैं।

विचार एक चित्त से दूसरे चित्त तक जो प्रवास करते हैं, इसका वाहन या माध्यम क्या हो सकता है? इसका यथासम्भव समीचीन उत्तर यह है कि ईथर के समान 'मनस्तत्त्व' भी समूचे आकाश में व्याप्त है और वह विचारों का वैसे ही वाहन बनता है, जैसे प्राणतत्त्व भावनाओं का वाहन है, ईथर उष्णता, प्रकाश और विद्युत् का वाहन है तथा वायु ध्वनि का वाहन है।

३. आकाश में विचार सुरक्षित हैं

आप विचार-शक्ति के बल पर संसार को हिला सकते हैं। विचार में महाबल है। एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में वह संचारित किया जा सकता है। प्राचीन युग के महर्षियों और महायोगियों के शक्तिशाली विचार अब भी आकाश में सुरक्षित हैं।

जिन योगियों को अगोचर वस्तुओं को देख सकने की आन्तरिक शक्ति सिद्ध हुई है वे उन विचारों के प्रतिबिम्ब को देख सकते हैं तथा उन्हें पढ़ सकते हैं।

आपके चारों ओर विचारों का सागर भरा हुआ है। आप विचार-सागर में तैर रहे हैं। आप उनमें से कुछ विचार तो ग्रहण कर रहे हैं और कुछ विचार संसार में प्रत्यावर्तित कर रहे हैं।

प्रत्येक का अपना-अपना विचार-जगत् है।

४. विचार जीवित पदार्थ है

विचार जीवित पदार्थ है। कोई भी विचार उतना ही ठोस है, जितना एक पत्थर है। हम समाप्त हो सकते हैं, पर हमारे विचार कभी नहीं मिट सकते।

विचार के प्रत्येक परिवर्तन के साथ उसके तत्त्व में (मनस्तत्त्व में) कम्पन पैदा होता है। चूँकि विचार एक शक्ति है, उसे कार्य करने में एक विशेष प्रकार का सूक्ष्म पदार्थ आवश्यक होता है।

विचार जितना ही बलवान् होता है उतना ही शीघ्र वह फलित होता है। विचार को अमुक निश्चित दिशा में केन्द्रित करते हैं तो जिस अनुपात में हम केन्द्रित करते हैं उसी अनुपात में वह लक्ष्य सिद्ध करने में सफल होता है।

५. विचार : एक सूक्ष्म शक्ति

विचार एक सूक्ष्म शक्ति है। हममें हमारे आहार के साथ यह उत्पन्न होता है। छान्दोग्योपनिषद् में—उद्दालक और श्वेतकेतु के संवाद में—इस विषय का अच्छा प्रतिपादन किया गया है।

यदि आहार शुद्ध और पवित्र है, तो विचार भी शुद्ध और पवित्र होते हैं। जिसके विचार शुद्ध हों उसकी वाणी तेजस्वी होती है और श्रोताओं पर गहरा प्रभाव डालती है। वह अपने शुद्ध विचारों से सहस्रों मनुष्यों को प्रभावित कर सकता है।

शुद्ध विचार तलवार की धार से भी तीक्ष्ण होता है। सर्वदा शुद्ध विचार ही करना चाहिए। विचार-संस्कृति एक पवित्र विज्ञान है, पूर्ण शास्त्र है।

६. बेतार के तार का दृष्टान्त

जिन व्यक्तियों में द्वेष, ईर्ष्या, प्रतीकार, प्रतिहिंसा आदि के दुष्ट विचार भरे हैं, वे निश्चय ही महाभयानक हैं। वे औरों की अशान्ति और दुर्बलता के मूल कारण हैं। उनके वे दुष्ट विचार बेतार के तार के समान हैं, रेडियो-प्रसारण के समान हैं। विचार 'ईथर' में प्रसारित होते रहते हैं और जिन-जिन लोगों के चित्त में तदनुकूल कम्पन होता रहता है, वे उन्हें ग्रहण करते हैं।

विचार की गति अत्यन्त प्रबल है। उदात्त और सद्विचार महान् उपकार के कारण हैं। जिनमें वैसे विचार हैं, उनका सद्-प्रभाव उनके निकटस्थ तथा दूरस्थ मनुष्यों पर अवश्य पड़ता है।

७. विचार की अद्भुत शक्ति

विचार में अद्भुत शक्ति भरी है। विचार-शक्ति से रोग दूर हो सकते हैं। विचार मनुष्यों की मनोवृत्ति बदल सकता है। विचार से सब-कुछ सम्भव है। वह चमत्कार कर सकता है। उसका वेग अचिन्त्य है।

विचार तेजस्वी होता है। मानसिक या सूक्ष्म प्राणतत्त्व के कारण जब मनस्तत्त्व में कम्पन निर्माण होता है, तब विचार उत्पन्न होते हैं। यह आकर्षण-शक्ति, संश्लेषण-शक्ति अथवा अपकर्षण-शक्ति की तरह एक शक्ति है। विचार में गति है।

८. विचार-तरंग और विचार-संचरण

आखिर यह जगत् क्या है? यह हिरण्यगर्भ या ईश्वर के विचारों के मूर्त रूप के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं है।

वैज्ञानिकों ने सिद्ध किया है कि उष्णता, प्रकाश, विद्युत् आदि की तरंगें हुआ करती हैं। योगशास्त्र कहता है कि विचार की भी तरंगें होती हैं। विचार की शक्ति अद्भुत है। प्रत्येक व्यक्ति को जाने-अनजाने न्यूनाधिक परिमाण में विचार-शक्ति का अनुभव होता ही है।

ज्ञानदेव, भर्तृहरि, पतंजलि आदि महान् योगी जन विचार-संचरण आदि चित्त-शक्ति (मानसिक रेडियो) द्वारा दूसरों को और दूर-दूर के लोगों तक को अपनी बात पहुँचाते थे और उनकी बात ग्रहण करते थे। यह जो विचार-संचरण की चित्त-शक्ति है, जिसे 'टेलीपैथी' (Telepathy) कहते हैं, यही जगत् में बेतार के तार और टेलीफोन (दूरभाष) का प्रथम आविष्कार है।

जिस प्रकार हम शारीरिक स्वास्थ्य-रक्षा के लिए व्यायाम करते हैं, टेनिस, क्रिकेट आदि खेलते हैं, उसी प्रकार मानसिक स्वास्थ्य बनाये रखने के लिए सद्विचार की तरंगें विकीर्ण करनी चाहिए, सात्त्विक आहार ग्रहण करना चाहिए, निर्दोष और हितकारी मनोरंजन के साधनों से मन को प्रसन्न रखना चाहिए, सुन्दर उच्च और निरापद विचारों द्वारा भाव-परिवर्तन करते हुए मन को विश्राम भी देना चाहिए और सर्वदा प्रसन्न रहने का अभ्यास करना चाहिए।

९. विचार-कम्पन के चमत्कार

हमारे चित्त से जितने भी विचार निर्मित होते हैं, उनका अपना एक कम्पन होता है, जो नित्य है, कभी मिटता नहीं। वह संसार की प्रत्येक वस्तु के कण-कण को कम्पित करता आया है और हमारे विचार यदि उन्नत है, पवित्र हैं, प्रभावशाली हैं तो प्रत्येक संवेदनशील चित्त में कम्पन उत्पन्न करेंगे।

हमारे विचारों के अनुकूल जिन-जिन के विचार हैं, वे अनजाने ही हमारे उन विचारों को ग्रहण करते हैं, जिन्हें हमने प्रसारित किया है और वे भी अपनी ओर से यथाशक्ति वैसे ही विचार प्रेषित करते हैं। फल-स्वरूप, हम अपनी क्रिया के परिणामों को जाने बिना ही बहुत बड़े विचार-चक्र को चालना देते हैं और वे सब विचार मिल कर

उन निकृष्ट और निम्न स्तर के विचारों को पराभूत करते हैं जिन्हें स्वार्थी तथा दुर्जन व्यक्ति उत्पन्न करते रहते हैं।

१०. विचार-तरंगों की विविधता

प्रत्येक मनुष्य का अपना-अपना मनोजगत् होता है, उसकी अपनी विचार-सरणी होती है, वस्तुओं को समझने का अपना ढंग होता है और काम करने की अपनी पद्धति होती है।

जिस प्रकार मुखाकृति एवं स्वर प्रत्येक व्यक्ति का दूसरे से भिन्न होता है, उसी प्रकार समझने की और सोचने की पद्धति भी प्रत्येक की भिन्न होती है। अतः मित्रों में अनायास ही मतभेद और भ्रान्ति हो जाया करती है।

एक मनुष्य दूसरे मनुष्य के दृष्टिकोण को ठीक से समझ नहीं पाता। अतः घनिष्ठ मित्रों में भी क्षण-भर में तनाव, संघर्ष और अनबन हो जाती है। मित्रता अधिक समय तक टिक नहीं पाती।

प्रत्येक को दूसरों के मानसिक कम्पन अथवा विचार-कम्पन के साथ एकत्व भाव हो जाने का प्रयत्न करना चाहिए। तभी एक-दूसरे को सरलता से समझा जा सकेगा।

वासनामय विचार, द्वेषपूर्ण विचार, ईर्ष्या और स्वार्थपूर्ण विचार चित्त में विकार निर्माण करते हैं, ज्ञान पर आवरण डाल देते हैं, बुद्धि को भ्रष्ट कर देते हैं, स्मृति-नाश करते और मन में उलझन बढ़ा देते हैं।

११. विचार-शक्ति का संचय

भौतिक विज्ञान में एक शब्द है, 'अनुस्थापन-शक्ति' (Power of Orientation)। पदार्थ में यद्यपि 'ऊर्जा (Energy) पड़ी हुई है, फिर भी वह स्वयं प्रवाहित नहीं होती। उसे चुम्बक से जोड़ना पड़ता है, तब वह विद्युत् के रूप में उस 'अनुस्थापन-शक्ति' के गुण के द्वारा प्रवाहित होने लगती है।

इसी प्रकार मानसिक शक्तियाँ आज जो कलुषित हो रही हैं और विविध निरर्थक वैषयिक विचारों में जिनका अपव्यय हो रहा है, उन्हें सही आध्यात्मिक मार्ग में काम में लाया जा सकता है।

आप अपने मस्तिष्क में व्यर्थ की जानकारी न भरे रखें। मन को यथासम्भव शून्य बनाना सीखें। आपके लिए जिस-जिस ज्ञान का उपयोग न हो, वह सब भूल जायें। तभी आप अपने मन को दिव्य विचारों से भर सकेंगे। अब जैसे विकृत विचारों की तरंगें आपके मस्तिष्क में संचित हैं, उनके बदले तब आप नयी चित्त-शक्तियाँ अर्जन करेंगे।

१२. कोष-सिद्धान्त और विचार

शरीर के प्रत्येक कोष (Cell) की एक न्यष्टि (Nucleus) होती है और उसके चारों ओर प्रस (Protoplasm) समूह होता है। इन सबका मिल कर एक कोष बनता है। उसमें चेतना होती है। कुछ कोष उदासर्जन (Secrete) करने वाले होते हैं और कुछ उत्सर्जन (Excrete) का काम करते हैं। वृषण के कोष रेतस् का उदासर्जन तथा वृक्क के कोष मूत्र का उत्सर्जन करते हैं। कुछ कोषों का काम सिपाही का होता है। वे शरीर में विजातीय विष-द्रव्यों और कीटाणुओं को प्रवेश करने से रोकते हैं। वे उन्हें पचा देते हैं और बाहर निकाल फेंकते हैं। कुछ कोष होते हैं जो शरीर के अंग-प्रत्यंग तक उनका आहार पहुँचाते हैं।

आप उनकी ओर ध्यान दें अथवा न दें, ये कोष अपना काम बराबर करते रहते हैं; परन्तु उनकी क्रियाओं पर संवेदनशील नाड़ी-संस्थान का नियन्त्रण रहता है। मस्तिष्क में स्थित मन के साथ उनका सीधा सम्बन्ध रहता है।

मन का प्रत्येक उद्वेग, प्रत्येक विचार उन कोषों को स्पर्श करता है। मन की बदलती हुई अवस्थाओं से वे कोष विशेष प्रभावित होते हैं। मन में कभी कोई उलझन पैदा हो जाये, निराश छा जाये या ऐसी ही कोई अवांछित संवेदना निर्मित हो जाये, तो शरीर के प्रत्येक कोष तक उसकी अनुभूति तार की भाँति तत्क्षण ही नाड़ियों के द्वारा पहुँचा दी जाती है। जो सैनिक-कोष हैं, उन्हें तत्काल धक्का लगता है। वे दुर्बल हो जाते हैं। वे अपना काम ठीक से नहीं कर पाते। वे अक्षम बन जाते हैं।

कुछ लोगों को सदा अपने शरीर की ही चिन्ता लगी रहती है; उन्हें आत्मा का रंचमात्र विचार नहीं आता। उनका जीवन अस्त-व्यस्त रहता है। कोई नियम नहीं, अनुशासन नहीं। भोजन में संयम नहीं रह पाता। पेट में मिठाई ठूँसते रहते हैं, चटोरी चीजें अनाप-शनाप भरते रहते हैं। उनके पेट तथा जीर्ण अंगों को किंचित् विश्रान्ति नहीं मिलती। शरीर सदा रोगग्रस्त एवं दुर्बल रहता है। उनके शरीर के अणु, परमाणु और कोष, विसंगत और असामंजस्य कम्पन पैदा करते रहते हैं। ऐसे लोगों में श्रद्धा, विश्वास, आशा, शान्ति और प्रसन्नता का नितान्त अभाव होता है। वे सदा उद्विग्न रहते हैं। उनकी प्राण-शक्ति ठीक से कार्य नहीं करती। उनकी चैतन्य-शक्ति अत्यन्त क्षीण हो जाती है। उनके मन में भय, निराशा, उद्विग्नता और परेशानी भरी रहती है।

१३. आदि विचार और आधुनिक विज्ञान

इस भूतल पर विचार-शक्ति एक महान् शक्ति है। योगी के शस्त्र-सम्भार में विचार एक सर्वाधिक शक्तिशाली शस्त्र है। विधायक विचार ऊँचा उठाते हैं, स्फूर्ति देते हैं और निर्माण करते हैं।

हमारे पूर्वजों ने इस शक्ति की अत्यन्त दूरगामी सम्भावनाओं को समुचित रीति से समझा था, उनका विकास किया था और उनका यथासम्भव उत्कृष्ट उपयोग भी किया था।

समस्त सृष्टि का मूलाधार आदि-शक्ति विचार ही है। विश्व-चित्त में जो एक विचार स्फुरित हुआ, उसी से इस सकल दृश्य जगत् का निर्माण हुआ है।

आदि विचार का आविर्भाव ही यह विश्व है। इस आदि विचार के आविर्भाव के कारण ईश्वरीय संकल्प की स्तब्धता स्पन्दित हो उठी। विश्वात्मा हिरण्यगर्भ में जो इच्छा पैदा हुई, जो स्पन्दन का मूल आधार है उसका यह शास्त्रीय निर्वचन है।

यह स्पन्दन कोई भौतिक कणों के झूले की तरह आगे-पीछे तीव्र गतिशील नहीं है, परन्तु यह इतना सूक्ष्म है कि साधारण मन से उसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती।

परन्तु इससे यह बात स्पष्ट हुई कि कोई भी शक्ति स्पन्दन में परिणत हो सकती है। आधुनिक विज्ञान भी भौतिक जगत् में सुदीर्घ अनुसन्धानों के बाद अब पुनः इसी निष्कर्ष पर पहुँचा है।

१४. रेडियम (तेजातु) और दुर्लभ योगी

रेडियम एक दुर्लभ वस्तु है। विचार-शक्ति को पूर्णतः नियन्त्रित करने वाले योगी भी इस संसार में रेडियम की ही तरह दुर्लभ हैं।

जिस योगी ने अपने विचारों पर काबू पा लिया है और निरन्तर ब्रह्म में अवस्थित है, उससे दिव्य गन्ध और दिव्य तेज (ब्रह्म-तेज) उसी प्रकार निःसृत होता रहेगा जिस प्रकार अगरबत्ती से निरन्तर मधुर सुगन्धि निकलती रहती है।

उसका जो तेज और सुगन्ध है, वह ब्रह्मवर्चस् कहलाता है। ज्यों-ही आप गुलाब, मोगरा और चम्पा के फूलों का गुलदस्ता उठा लेते हैं तो तुरन्त चारों ओर उसकी सुगन्ध फैल जाती है और सभी को मुग्ध कर लेती है।

उसी प्रकार विचार को वश में कर चुके योगी का यश और उसकी कीर्ति दूर-दूर तक फैले बिना नहीं रहती। वह एक विश्व-शक्ति बन जाता है।

१५. विचार का भार, आकार और प्रकार

प्रत्येक विचार का अपना एक भार होता है, आकार होता है, स्वरूप, प्रकार, वर्ण, गुण और शक्ति होती है। योगी अपने योग की अन्तर्दृष्टि से यह सब प्रत्यक्ष देख सकता है।

विचार भी पदार्थ की तरह है। जिस प्रकार आप एक सन्तरा उठा कर अपने मित्र को दे सकते हैं और उससे ले सकते हैं, उसी प्रकार उपयोगी और बलशाली विचार भी आप दूसरों को दे सकते हैं और लौटा सकते हैं।

विचार एक बड़ी शक्ति है। वह चलता है, वह निर्माण करता है। विचार-शक्ति के द्वारा अद्‌भुत कार्य हो सकते हैं। इसके लिए उसे हस्तगत करने की और ठीक से उपयोग करने की सही पद्धति जान लेना आवश्यक है।

१६. विचार : उसका रूप, वर्ण और नाम

मान लीजिए आपका मन पूर्णतया शान्त है, विचारों से सर्वथा मुक्त है; लेकिन ज्यों-ही विचार आने लगे, तत्काल वह कोई-न-कोई नाम और रूप धारण कर लेता है।

प्रत्येक विचार का एक-न-एक नाम और कुछ-न-कुछ रूप होता ही है। इस प्रकार आप देखते हैं कि मनुष्य में जो भी विचार आता है या आ सकता है, वह किसी-न-किसी शब्द के साथ अवश्य जुड़ा होता है, मानो वह उसका अंग ही है।

शक्ति का एक ही आविर्भाव है, जिसे हम विचार कहते हैं; उसी की स्थूल अवस्था को आकार और सूक्ष्म अवस्था को नाम कहा जाता है।

परन्तु ये तीनों एक ही हैं। जहाँ एक होगा, वहाँ अन्य दो होंगे ही। जहाँ नाम है, वहाँ आकार भी है, विचार भी है।

आध्यात्मिक विचार का वर्ण पीला है। क्रोध तथा द्वेषयुक्त विचार का वर्ण गहरा काला है। स्वार्थी विचार का वर्ण मटमैला होता है।

१७. विचार : उसका बल, काम और उपयोग

विचार एक तेजस्वी, प्राणवान् गतिशील शक्ति है, विश्व-भर में अत्यधिक तेजस्वी, सूक्ष्म और अप्रतिहत बल यही एक है।

विचार को कार्यान्वित करने से विधायक शक्ति निर्माण होती है। विचार एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में संचरित होता है, मनुष्यों को प्रभावित करता है। जरा भी विचार-शक्ति प्राप्त होने पर दुर्बल विचार वाले सहस्रों लोगों को निश्चित रूप से प्रभावित किया जा सकता है।

विचार-संस्कृति, विचार-शक्ति, विचार-प्रेरणा आदि विषयों से सम्बन्धित साहित्य आजकल बहुत है। उनको पढ़ने से विचार-सम्बन्धी सम्पूर्ण जानकारी, उसकी शक्ति, काम और उपयोग आदि का समग्र परिचय प्राप्त हो सकता है।

१८. असीम विचार-जगत्

एकमात्र विचार ही समस्त विश्व है। महादुःख, वार्धक्य, मृत्यु, महापाप, भूतल, आकाश, जल, वायु, अग्नि सब वही है। विचार मनुष्य को बाँधता है। जिस मनुष्य ने विचारों को वश में कर लिया है, वह इस धरती पर साक्षात् भगवान् है।

हम विचार के संसार में जीते हैं। विचार पहले उत्पन्न होता है। उसके बाद वागिन्द्रिय के द्वारा उस विचार का प्रकटीकरण होता है। विचार और वाणी का घनिष्ठ सम्बन्ध है। क्रोध, कटुता और घृणा से युक्त विचार औरों को दुःख देते हैं। इन सब विचारों का आश्रय-रूप मन यदि नष्ट हो जाता है तो फिर बाह्य विषय भी नष्ट हो जाते हैं।

विचार भी पदार्थ है। शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध, पंचकोश, जागृति और सुषुप्ति—ये सब मन की कृतियाँ हैं। संकल्प, भावना, क्रोध, बन्धन, काल—ये भी मन के ही परिणाम हैं। मन सभी इन्द्रियों का राजा है और मन की सभी प्रवृत्तियों का मूल है विचार।

हम अपने चारों ओर जो विचार-समूह देखते हैं, वह मन का ही स्थूल रूप है। विचार ही बनाता है, विचार ही बिगाड़ता है। कड़ुवाहट और मिठास वस्तुगत नहीं हैं, वे तो मनोगत हैं, व्यक्तिगत हैं, विचार में हैं। ये विचार से निष्पन्न हैं।

विषयों पर मन या विचार का जो खेल चलता है, उसी से दूर की वस्तुएँ समीप हो जाती हैं, समीप की वस्तुएँ दूर हो जाती हैं। इस संसार की सभी वस्तुएँ एक-दूसरे से जुड़ी हुई नहीं हैं। वे तो हमारे विचारों से, मन की कल्पनाओं से जोड़ी जाती हैं, मिलायी जाती हैं। मन ही है जो प्रत्येक विषय को रूप, रंग और गुण देता है। मन जिस किसी वस्तु का एकाग्र चिन्तन करने लगता है, स्वयं तद्रूप बन जाता है।

शत्रु-मित्र, गुण-दोष सब मन में ही हैं। प्रत्येक मनुष्य भले-बुरे का, सुख-दुःख का अपनी-अपनी कल्पना से अलग-अलग संसार ही बसा लेता है। भला और बुरा, सुख और दुःख उन वस्तुओं में नहीं है। संसार में कुछ भी न अच्छा है, न सुखमय है—हमारी कल्पना ही उसे अच्छा-बुरा, सुखमय अथवा दुःखमय बनाती है।

१९. विचार, विद्युत् और दर्शन

विचारों में अति अद्भुत शक्ति है। बिजली से भी बड़ी शक्ति उनमें है। वे हमारे जीवन को नियन्त्रित करते हैं, हमारा चारित्र्य गढ़ते हैं तथा हमारा भाग्य-निर्णय करते हैं।

आप देखें, क्षण मात्र में एक विचार किस प्रकार सहस्रों रूप ले लेता है। मान लीजिए, आपने अपने मित्रों को चाय-पार्टी देने का विचार किया। केवल एक 'चाय' का विचार आते ही उसके साथ फौरन चीनी, दूध, केक, बिस्कुट, प्याला, मेज, कुरसी, मेजपोश नेपकिन, चम्मच आदि-आदि अनेकानेक वस्तुओं का विचार उठने लगता है। इसलिए यह संसार विचारों के विस्तार के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं है। मन के विचारों का विषयों के प्रति विस्तृत होते जाने का नाम ही बन्धन है और उनका सिमटना, उनका त्याग ही मुक्ति कहलाता है।

हमें सतर्क रहना चाहिए और विचारों को, खिलने से पहले, कली की अवस्था में ही तोड़ फेंकना चाहिए। तभी हम सुखी रह सकेंगे। मन मायावी है। कई खेल खेलता है। उसका स्वभाव, उसका कार्य और उसके ढंग को हमें समझ लेना चाहिए। तब उस पर अधिकार पाना सरल होगा।

भारत के व्यावहारिक दार्शनिक आदर्शवाद का असाधारण और सर्वोत्कृष्ट ग्रन्थ 'योगवासिष्ठ' है। इस कृति का सार है : "अद्वितीय ब्रह्म या एक अमर आत्मा का ही अस्तित्व है। यह संसार कुछ नहीं है। आत्मज्ञान ही मनुष्य को जन्म-मरण के चक्र से छुड़ा सकता है। विचारों की समाप्ति और वासनाओं का नाश ही मोक्ष है। मन का फैलाव ही संकल्प है। यह संकल्प या विचार ही भेदभाव पैदा करने की अपनी शक्ति से इस विश्व की रचना करता है। यह संसार मन का ही खेल है। तीनों कालों में इस संसार का अस्तित्व नहीं है। संकल्पों का नाश ही मोक्ष है। इस छोटे-से 'मैं' को मिटा दो; वासना, संकल्प, विचार को समाप्त कर दो; आत्मा का ध्यान करो और जीवन्मुक्त बनो।"

२०. बाहरी संसार पहले से विचार में है

प्रत्येक विचार का अपना एक चित्र है। मेल का अर्थ है—एक मानसिक कल्पना और कुछ बाह्य पदार्थ का मेल।

बाहरी संसार में हम जो भी देखते हैं, उसका एक अंग अन्दर मन में है। आँख की पुतली इतनी छोटी-सी वस्तु है, आँख का गोला भी बहुत छोटा है, तो यह कैसे सम्भव है कि इतनी छोटी-सी वस्तु से पर्वत जितना बड़ा पदार्थ ग्रहण हो जाता है और मन में बस जाता है? यह तो आश्चर्यों का आश्चर्य है।

पर्वत का चित्र मन में पहले से ही था। मन तो कपड़े के एक बड़े परदे के समान है, जिस पर बाहर दीखने वाले हर पदार्थ का चित्र अंकित हो जाता है।

२१. विश्व : विचार-सृष्टि

ध्यान से देखें तो पता चलेगा कि यह समूचा संसार वस्तुतः मानव-मन की ही कृति है, '**मनोमात्रं जगत्**'। मन को शुद्ध करना और नियमित करना ही सभी योगों का प्रमुख हेतु है। मन एक रिकार्ड के सिवा कुछ नहीं, जो प्रत्येक संसार को अपने में अंकित कर लेता है और भावनाओं तथा विचारों के रूप में निरन्तर प्रकट करता रहता है। विचार हमें क्रिया के लिए प्रेरित करता है। क्रिया मन पर नये और ताजे संस्कार डालती है।

योग इस विष-चक्र को प्रारम्भ में की काट देता है। मन की क्रियाओं को अपने ढंग से एकदम रोक देता है। योग मन के मूल कार्य को अर्थात् विचारों को रोकता है, नियन्त्रित करता है और समाप्त कर देता है। ज्यों-ही विचार उन्नत हो जाता है, त्यों-ही प्रज्ञा जाग उठती है और आत्मज्ञान का उदय होने लगता है।

विश्व को पल-भर में बनाने या बिगाड़ने की क्षमता विचार में है। मन अपने संकल्प या विचार के अनुरूप सृष्टि रच लेता है। मन ही इस जगत् का स्रष्टा है—"**मनोमात्रं जगत्; मनःकल्पितं जगत्।**" मन का यह खेल है कि कल्प-काल को क्षण में बदल दे या क्षण को कल्प बना दे। जिस प्रकार स्वप्न अपने में दूसरा स्वप्न पैदा करता है, उसी प्रकार यह मन स्वयं अदृश्य हो कर भी दृश्य जगत् का निर्माण करता है।

२२. विचार, विश्व और कालातीत सत्य

इस संसार-वृक्ष का मूल कारण मन ही है। इसकी अनन्त प्रशाखाएँ हैं, असंख्य फल और पत्र हैं। यदि हम विचार को मिटा सकें तो तुरन्त इस संसार-वृक्ष को मिटा सकते हैं। विचारों को उनके उत्पन्न होते ही समाप्त कर देना चाहिए। विचारों को समाप्त कर देने से मूल नष्ट हो जायेगा। फलतः संसार-वृक्ष भी शीघ्र नष्ट हो जायेगा।

इसके लिए विशेष धैर्य और सहिष्णुता की आवश्यकता है। जब सभी विचार समाप्त कर दिये जायेंगे, तब आप आनन्द-सागर में निमग्न हो जायेंगे। उस स्थिति का वर्णन नहीं हो सकता। वह प्रत्येक व्यक्ति को अपने में ही अनुभव करने की वस्तु है।

लकड़ी के जल चुकने पर जिस प्रकार अग्नि अपने मूल-रूप में लीन हो जाती है, उसी प्रकार जब संकल्प और विचार समाप्त हो जाते हैं, तब मन अपने मूल-रूप आत्मा में लीन हो जाता है। उस समय मनुष्य कैवल्य प्राप्त करता है, कालातीत सत्य का अनुभव करता है, परम स्वातन्त्र्य की स्थिति में पहुँच जाता है।

द्वितीय अध्याय

विचार-शक्ति : सिद्धान्त और गति-शक्ति

१. विचार : भाग्य-निर्माता

यदि मन निरन्तर किसी एक ही विचार-सरणी पर स्थिर रहता है, तो उसकी एक प्रसीता बन जाती है जिस पर विचार स्वतः दौड़ने लगता है। यह जो विचार का स्वभाव बन जाता है, मरणोपरान्त भी बना रहता है तथा 'अहंकार' से सम्बन्धित होने के कारण विचार-क्षमता और विचार-प्रवृत्ति के रूप में पश्चाद्वर्ती ऐहिक जीवन में अग्रनीत होता रहता है।

स्मरण रहे, प्रत्येक विचार के साथ उसका अपना एक मानस-चित्र होता है। किसी भौतिक जीवन-विशेष में ऐसे जितने भी मानस-चित्र बनते हैं, उनके कुल सार का व्यक्ति के मानसिक क्षेत्र में लेखा-जोखा निकाला जाता रहता है। वही उसके दूसरे भौतिक जीवन की भूमिका तैयार करता है।

प्रत्येक नये जन्म के साथ जिस प्रकार नये शरीर की रचना होती है, उसी प्रकार प्रत्येक नये जन्म में नया मन और नयी बुद्धि भी बनती है।

विचार और भाग्य की सारी प्रक्रियाओं का क्रमिक रूप से वर्णन करना सरल नहीं है। प्रत्येक क्रम द्विविध परिणाम उत्पन्न करता है—एक व्यक्ति के चित्त पर और दूसरा विश्व पर। मनुष्य अपने कर्मों द्वारा दूसरों पर जो प्रभाव डालता है, उसी से वह अपने भावी जीवन का वातावरण तैयार करता है।

प्रत्येक कर्म का अपना एक पूर्व-भाव होता है यहाँ से कर्म उत्पन्न होता है और उसका अपना एक भविष्य होता है जो उस (कर्म) से उदय होता है। प्रत्येक क्रिया के पीछे एक इच्छा रहती है जिससे वह क्रिया प्रेरित होती है और एक विचार रहता है जिससे वह साकार होती है।

प्रत्येक विचार कार्य-कारण-भाव की अनन्त शृंखला की एक कड़ी होता है, प्रत्येक कार्य दूसरे कार्य का कारण बनता है और प्रत्येक कारण दूसरे कारण का कार्य बनता है। इस अखण्ड शृंखला की प्रत्येक कड़ी तीन अवयवों—इच्छा, विचार और

क्रिया की संघटक है। इच्छा विचार को उद्दीप्त करती है। विचार क्रिया का रूप धारण करता है। क्रिया भाग्य का ताना-बाना बुनती है।

कोई मनुष्य यद्यपि इस जीवन में प्रत्यक्ष रूप सें कभी भी ठगी नहीं करता; किन्तु मन-ही-मन दूसरे की वस्तु का स्वार्थपूर्ण लोभ करता है, तो वही आगामी जन्म में उसके चोर बनने का कारण होता है। बैठे-बैठे किसी से द्वेष तथा प्रतीकार की भावना रखें, तो वही आगे चल कर हत्यारा बनने में बीज का कार्य करती है।

इसके विपरीत निःस्वार्थ प्रेम का चिन्तन करने पर बड़ा दानी और सन्त बनता है। प्रत्येक करुणापूर्ण विचार कोमल और दयालु प्रकृति के निर्माण में सहायक होता है जिससे मनुष्य प्राणिमात्र का मित्र बनता है।

महर्षि वसिष्ठ राम से पुरुषार्थ करने को कहते हैं। वह कहते हैं—"भाग्य पर निर्भर मत रहो। उससे अकर्मण्यता और आलस्य की वृद्धि होती है। विचार की महान् शक्ति पर ध्यान दो। पुरुषार्थ करो। सम्यक् विचार द्वारा अपने लिए सद्भाग्य का निर्माण करो।"

प्रारब्ध पूर्व-जन्म का पुरुषार्थ ही तो है। हम क्रिया का बीज बोते हैं और उसके फल-स्वरूप स्वभाव बनता है; फिर स्वभाव के बीज से चारित्र्य फलता है। हम चारित्र्य-रूपी बीज बो कर भाग्य-रूपी फल प्राप्त करते हैं।

मनुष्य अपने भाग्य का स्वयं निर्माता है। हम अपनी विचार-शक्ति के द्वारा अपना भाग्य निर्माण करते हैं। भाग्य को हम चाहें तो मिटा सकते हैं। सभी क्षमताएँ, सारी शक्तियाँ और सारे सामर्थ्य हमारे अन्दर पड़े हैं। उन्हें प्रकट करें तो महान् बन जायें, मुक्त हो जायें।

२. विचार हमें आकार देता है

हमारी मुखाकृति ग्रामोफोन के रिकार्ड की तरह है। अन्दर हम जो-कुछ भी विचार करते हैं, वह तत्काल उस पर प्रतिबिम्बित हो जाता है।

प्रत्येक असद् विचार एक सूई या छेनी की तरह हमारी मुखाकृति पर हमारे विचारों को अंकित कर देता है। मन में ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध, वासना, प्रतिहिंसा आदि दुर्भावनाओं के कारण ही हमारे मुख पर व्रण आदि के चिह्न होते हैं।

मुख पर के चिह्नों को देखते ही पहचान सकते हैं कि आपकी मनःस्थिति क्या है। तुरन्त आपके मनोरोग का निदान कर सकते हैं।

जो सोचता है कि अपने मन के भावों को वह छिपा सकता है, यह उसका केवल भ्रम है। उसकी स्थिति बिलकुल उस शुतुरमुर्ग (ostrich) की तरह है, जो शिकारी जब पीछा करता है, तब वह रेत में अपना शिर छिपा लेता है और सोचता है कि अब मुझे कोई नहीं देख रहा है।

मुख मन का दर्पण है। चेहरा मन का साँचा है। प्रत्येक विचार मुख पर अपनी छाप छोड़ जाता है। दिव्य विचार मुख को उज्ज्वल बनाता है। दुष्ट विचार मुख पर कालिमा पोत देता है। निरन्तर दिव्य विचार करते रहने से मुख की कान्ति एवं तेज निखरता जाता है।

निरन्तर असद् विचार करते रहने से मुख पर कुत्सित चिह्न गहरे होते जाते हैं जैसे कुएँ से पानी खींचते समय यदि घड़ा कुएँ के किनारे से बराबर टकराता रहे, तो वह (किनारा) दिन-प्रति-दिन दबता ही जाता है। मुख के भाव निश्चित ही अन्तःस्थिति का, मनोगत भावों का प्रत्यक्ष विज्ञापन करने वाले होते हैं।

मुख उस विज्ञापन-पट्ट के समान है जिस पर मन के भीतर की सारी बातों का विज्ञापन हो जाता है। हमारे विचार, विकार, वासना, उद्वेग आदि के उस (मुख) पर स्पष्ट चिह्न अंकित होते रहते हैं।

हम अपने मनोभावों को कदाचित् ही अपने मुख पर छिपा पाते हैं। भले ही हम मान लें कि हमने अपने विचारों को गुप्त रख लिया है, लेकिन यह हमारी भूल है। कामना, वासना, लोभ, मत्सर, क्रोध, द्वेष आदि सभी वृत्तियाँ हमारे मुख पर तत्काल गहरा प्रभाव डालती हैं।

मुखाकृति एक निष्ठावान् अभिलेखक तथा संवेदनशील पंजीयक यन्त्रकलाप है जो हमारे मनोजात सभी विचारों को पंजीकृत तथा लेखबद्ध करती है।

मुखाकृति परिमार्जित दर्पण है जिसमें हर समय मन की वृत्तियों और आशयों का प्रतिबिम्ब स्पष्ट झलकता है।

३. विचार का आकार और स्थूल भाव

मन स्थूल शरीर का सूक्ष्म रूप है। यह स्थूल शरीर विचारों की बाह्य अभिव्यक्ति है; अतः जब मन कलुषित होता है, तब शरीर भी कलुषित हो जाता है।

जिस व्यक्ति की आकृति क्रूर दिखायी देती हो, वह सामान्यतया दूसरों के प्रति प्रेम एवं करुणा जाग्रत नहीं कर सकता। उसी प्रकार जिसका मन कठोर होगा, वह औरों में भी प्रेम और करुणा जाग्रत नहीं कर सकेगा।

मन बड़ी कुशलतापूर्वक अपनी विभिन्न अवस्थाओं को मुख पर प्रतिबिम्बित कर देता है, जिसे बुद्धिमान् व्यक्ति बड़ी सरलता से पढ़ अर्थात् समझ सकता है।

शरीर मन का अनुगामी है। यदि मन ऊँचाई से नीचे गिरने का विचार करता है, तो शरीर अपने को उसके लिए तुरन्त तैयार कर लेता है और बाह्य लक्षण प्रकट हो जाते हैं। भय, उद्वेग, शोक, प्रसन्नता, आह्लाद, क्रोध—सभी मुख पर भिन्न-भिन्न भाव उत्पन्न करते हैं।

४. तुम्हारे नेत्र तुम्हारे विचारों को प्रकट कर देते हैं

नेत्र आत्मा के वातायन माने जाते हैं, जो आपके मन की दशा एवं स्थिति बता देते हैं। विश्वासघात, दुःख, निराशा, द्वेष, प्रसन्नता, शान्ति, समाधान, स्वास्थ्य, शक्ति, सौन्दर्य आदि से सम्बन्धित समाचार और विचार प्रसारित करने के लिए नेत्र मानो दूरभाष-यन्त्र हैं।

यदि आपमें दूसरों के नेत्रों को समझने का गुण है तो आप दूसरे के हृद्गत भावों को तुरन्त जान जायेंगे। यदि आप किसी मनुष्य के मुख-लक्षण, संलाप तथा व्यवहार पर ध्यान दें तो आप उसके प्रमुख अथवा प्रभावशाली विचार को जान सकते हैं। इसमें किंचित् चतुरता, साहस, अभ्यास, बुद्धि और अनुभव की आवश्यकता है।

५. कुत्सित विचार विष के समान हैं

चिन्ता तथा भय के विचार हमारे लिए बड़े भयानक होते हैं। जीवन के मूल-स्रोत को ही वे सुखा देते हैं, विषाक्त कर देते हैं, जीवन को डाँवाडोल कर देते हैं, कार्यदक्षता, प्राणवत्ता और तेजस्विता को मिटा देते हैं।

इसके विपरीत प्रसन्नता, सुख, सन्तोष तथा साहस के विचार मनुष्य को स्वस्थ बनाते हैं, सरल और सौम्य बना कर उत्तेजित करने के स्थान में शान्ति और समाधान प्रदान करते हैं, कार्यक्षमता की अत्यधिक वृद्धि करते तथा मनोबल को बहुगुणित बनाते हैं।

सदा प्रसन्न रहें, हँसते रहें, मुस्कराते रहें।

६. मानसिक तथा शारीरिक असन्तुलन

विचारों का प्रभाव शरीर पर अनिवार्य रूप से पड़ता है। मन में यदि दुःख है, तो शरीर दुर्बल होता है। उलटे शरीर का भी प्रभाव मन पर पड़ता है। शरीर स्वस्थ रहा तो मन स्वस्थ रहता है। शरीर रोगी हुआ तो मन भी रोगी होता है। शरीर यदि हृष्ट-पुष्ट है तो मन भी हृष्ट-पुष्ट होता है।

दिमाग जब भयंकर उद्वेग से अभिभूत हो जाता है तब उससे मस्तिष्क के कोष क्षत-विक्षत हो जाते हैं, रक्त में विषमय रासायनिक परिवर्तन होने लगते हैं, व्यक्ति को आघात लगते तथा अवसाद उत्पन्न होता है एवं उसके जठर-रस, पित्त तथा अन्य पाचक रसों का उदासर्जन अवरुद्ध हो जाता है। मनुष्य की सारी शक्ति तथा सामर्थ्य सब बह जाते हैं, वह असमय में ही जराग्रस्त हो जाता है और उसकी आयु क्षीण हो जाती है।

आप देखें, जब भी क्रोध आता है तब मन विक्षिप्त हो उठता है। इसी प्रकार जब भी मन विक्षुब्ध होता है तब शरीर भी विक्षुब्ध हो जाता है। समूचा नाड़ी-संस्थान ही क्षुब्ध हो जाता है। आप दुर्बल हो जाते हैं।

इसलिए क्रोध को प्रेम से जीतो। क्रोध इतनी प्रबल शक्ति है कि सामान्य व्यावहारिक बुद्धि से उसे नियन्त्रित करना सम्भव नहीं है। उसके नियन्त्रण के लिए शुद्ध, सात्त्विक बुद्धि या विवेक-विचार आवश्यक है।

७. विचार की विधायक शक्तियाँ

विश्व का विधाता विचार है। विचार ही पदार्थों को अस्तित्व प्रदान करता है। विचार ही इच्छाओं को बढ़ाता और वासना को प्रेरित करता है। इसीलिए जब मनुष्य इच्छाओं और वासनाओं को मिटा देने का विरोधी विचार करने लगता है तो वह इच्छा और वासना की पूर्ति के पूर्व-कल्पित विचार को निष्फल बना देता है। इसलिए यदि

कभी किसी इच्छा और आकांक्षा या वासना को वश में करना हो तो उसके विपरीत विचार हमें सहायक हो सकते हैं।

किसी व्यक्ति को आप अपना सच्चा मित्र मान कर विचार कीजिए तो ऐसा लगेगा कि वह बिलकुल ठीक है। उसी को आप अपना शत्रु मान कर विचार कीजिए तो मन आपको यही प्रमाणित करेगा कि वह वास्तव में आपका शत्रु है।

इसलिए जो मनुष्य मन की गति-विधि को ठीक से जानता है और अभ्यासपूर्वक उसको अपने अधीन रखता है, वही सुखी है।

८. समान विचारों का परस्पर आकर्षण

विचार-जगत् में भी यह महान् सिद्धान्त लागू होता है कि 'दो समान वस्तुएँ परस्पर आकर्षित होती हैं।' जिन दो व्यक्तियों के विचार समान हों, वे एक-दूसरे की ओर आकर्षित होते हैं; इसीलिए लोग प्रायः कहा करते हैं कि 'दोस्तों को देख कर व्यक्ति को समझा जा सकता है।'

डाक्टर की ओर डाक्टर खिंचता है। कवि का आकर्षण कवि की ओर होता है। गायक गायक से प्रेम करता है। दार्शनिक दार्शनिक को चाहता है। दुर्जन दुर्जन से प्यार करता है। मन में खींच लेने की शक्ति है।

आपके विचारों और भावनाओं से मेल खाने वाले लोगों की व्यक्त अथवा अव्यक्त प्राण-शक्ति, विचार-शक्ति, प्रभाव-शक्ति तथा परिस्थितियों से आप निरन्तर आकर्षित होते रहते हैं।

हम जानते हों या नहीं जानते हों, परन्तु जीवन-भर यह सार्वभौम सिद्धान्त काम करता रहता है कि विचार-जगत् में समान विचार के लोग परस्पर आकृष्ट हुआ करते हैं।

आप अपने साथ चाहे जैसा विचार ले कर चलिए, जब तक आप उसे दृढ़ता से अपने पास रखे रहेंगे, तब तक आप भूमि पर, जल में, चाहे जहाँ कितना ही घूमते-फिरते रहें, कोई हर्ज नहीं, आप जाने-अनजाने उस अपने प्रमुख विचार के अनुकूल व्यक्तियों को अपनी ओर अनवरत खींचते रहेंगे। विचार आपकी निजी सम्पत्ति है। यदि आप अपने विचारों को अपनी रुचि के अनुकूल बना सकने की अपनी क्षमता को भली-भाँति समझ लें तो आप उनका नियमन कर सकते हैं।

यह पूरी-पूरी आप ही के वश की बात है कि आप किस प्रकार का विचार किया करें और उसके परिणाम-स्वरूप विश्व को अपनी ओर खींचने की किस प्रकार की शक्ति प्राप्त करें। यह कोई आवश्यक नहीं कि आप परिस्थिति के थपेड़े खाने वाले प्राणी ही बने रहें; लेकिन हाँ, शर्त यह है कि आप सचमुच वैसा शक्तिशाली बनना चाहें।

९. विचारों की संक्रामकता

मानसिक क्रिया ही वास्तविक क्रिया है। विचार ही यथार्थ क्रिया है। वह एक प्रावैगिक शक्ति है। यह स्मरणीय बात है कि विचार संक्रामक होता है; बल्कि किसी भी संक्रामक रोग से बढ़ कर संक्रामक है।

आपका एक संवेदनापूर्ण विचार आपके सम्पर्क में आने वाले व्यक्तियों के हृदय में भी संवेदना के विचार निर्माण करता है। जिसमें क्रोधमय विचार है, वह अपने चतुर्दिक् के लोगों में क्रोध का ही स्पन्दन पैदा करता है। विचार एक व्यक्ति के मस्तिष्क से दूर स्थित दूसरे व्यक्तियों के मस्तिष्क में संक्रमण करता है और वहाँ जा कर उनमें उत्तेजना पैदा करता है।

आपका एक प्रसन्नतापूर्ण विचार दूसरों में भी प्रसन्नता पैदा करता है । जब हम उल्लास से हँसते, खेलते, फुदकते शिशुओं को देखते हैं तो हमारा मन भी प्रसन्नता और आनन्द से भर जाता है।

हमारा सद्विचार दूसरों में भी समान रूप से सद्विचार जगाता है। उन्नत और उदात्त विचार भी इसी भाँति स्वानुरूप विचार पैदा करते हैं।

किसी भले और ईमानदार व्यक्ति को किसी चोर की संगति में रख दीजिए; कुछ समय में वह भी चोरी करने लगेगा। किसी सदाचारशील व्यक्ति को किसी शराबी के साथ रख दीजिए; वह भी पीने लग जायेगा। विचार बड़ा संक्रामक होता है।

१०. मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त का प्रयोग

चित्त को सदा तरुण बनाये रखो। यह न सोचो—'मैं बूढ़ा हो गया।' यह सोचना कि मैं बूढ़ा हो गया, बड़ी बुरी आदत है। ऐसा विचार मत करना। साठ वर्ष के हो जाओ तो समझना कि सोलह वर्ष के ही हो। जैसा सोचोगे वैसा ही बनोगे। यह एक महान् मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त है।

'यद् भावं तद् भवति'—यह एक बड़ा सत्य है। सोचो—'मैं बलवान् हूँ', तो बलवान् बन जाओगे। सोचो—'मैं दुर्बल हूँ', तो दुर्बल बन जाओगे। सोचो—'मैं मूर्ख हूँ', तो मूर्ख ही बनोगे और सोचो—'मैं योगी हूँ' या 'ईश्वर हूँ', तो योगी और ईश्वर ही बनोगे।

एक विचार ही है जो मनुष्य को आकार देता है, उसे ढालता है। मनुष्य सदा विचारों के जगत् में जीता है। प्रत्येक मनुष्य का अपना-अपना विचार-जगत् होता है।

कल्पना-शक्ति आश्चर्यजनक काम करती है। विचार में बहुत बड़ी शक्ति है। जैसे पहले कहा जा चुका है, विचार एक स्थूल द्रव्य है। आज का हमारा वर्तमान जीवन हमारे भूतकालीन विचारों का परिणाम है और आज के विचारों के अनुरूप हमारा भविष्य बनने वाला है। आपका विचार यदि सही है तो आपकी वाणी सही होगी, आपकी कृति सही होगी। वाणी और कृति दोनों बिलकुल विचार के ही अनुगामी हैं।

११. विचार-सिद्धान्त को समझो

प्रत्येक मनुष्य को इस बात की पूरी जानकारी कर लेनी चाहिए कि विचार के सिद्धान्त क्या हैं और वे कैसे काम करते हैं। तभी वह इस संसार में सरल सुखी जीवन यापन कर सकेगा और अपने ध्येय की सिद्धि में अनुकूल शक्तियों का पूर्ण उपयोग कर सकेगा।

विचार-शक्ति के नियमों और कार्य-पद्धतियों को जानने से मनुष्य अपनी विरोधी शक्तियों और प्रतिकूल धाराओं को कुण्ठित कर सकता है। मछली जिस प्रकार प्रवाह के विपरीत तैर लेती है, उसी प्रकार वह मनुष्य अपना सामंजस्य सँभाले हुए और अपनी सुरक्षा के सुयोग्य प्रबन्ध के साथ विरोध और प्रतिकूल धाराओं के विपरीत तैर सकता है।

अन्यथा वह दास बन जायेगा, कई धाराओं में थपेड़े खाते हुए असहाय हो कर इधर-उधर भटकता रह जायेगा। नदी में पड़े काष्ठफलक की भाँति वह बहता चला जायेगा। उसके पास पर्याप्त सम्पत्ति हो और सारी सुख-सुविधाएँ हों, तो भी वह सदा दुःखी और असन्तुष्ट ही रहेगा।

जलपोत का कप्तान यदि जानता हो कि मार्ग कहाँ है, कैसा है, समुद्र की अन्तर्धाराएँ किस-किस दिशा में बह रही हैं और उसके पास यदि दिशा-सूचक यन्त्र हो, तभी पोत को ठीक से, सुगमतापूर्वक चला सकता है, अन्यथा उसका पोत

इधर-उधर भटक जायेगा और कहीं जा कर किसी चट्टान से या हिम-खण्ड से टकरा कर चकनाचूर हो जायेगा। इसी प्रकार इस भवसागर का नाविक भी यदि विचार-शक्ति के नियमों और सिद्धान्तों को ठीक से जानता हो तो बड़ी सहजता से सागर को पार करेगा और अपनी मंजिल पर निश्चय ही पहुँच जायेगा।

विचार-शक्ति के नियमों को जान लेने से हम अपने चारित्र्य का गठन यथेष्ट रूप से कर सकते हैं। यह लोकोक्ति प्रचलित है कि **'यद् भावं तद् भवति'**, यह विचार-नियमों में एक बहुत प्रमुख नियम है। सोच लीजिए कि आप पवित्र हैं, आप पवित्र बन जायेंगे। सोच लीजिए कि आप श्रेष्ठ हैं, आप श्रेष्ठ बन जायेंगे।

सत् स्वभाव की साकार मूर्ति बनो। सबका भला सोचो। सदा सत्कार्य करो। सेवा करो। प्रेम करो। दान करो। दूसरों को प्रसन्न करो। दूसरों की सेवा करने में अनुराग रखो; तब तुम सुख-ही-सुख पाओगे, सारी परिस्थिति अनुकूल बन जायेगी, सुयोग प्राप्त होते जायेंगे तथा वातावरण सुखकर बनेगा।

यदि दूसरों को कष्ट दोगे, धोखा दोगे, ठगोगे, चुगली करोगे, अनबन पैदा करोगे, दूसरों का शोषण करोगे, अन्याय-मार्ग से औरों की सम्पत्ति हथिया लोगे, दूसरों को दुःख पहुँचाने का कोई भी असत्कार्य करोगे तो दुःख ही पाओगे, परिस्थिति प्रतिकूल बन जायेगी, दुर्योग प्राप्त होते जायेंगे तथा वातावरण दुःखदायी बनेगा।

यह विचार का नियम है, प्रकृति का सिद्धान्त है। जिस प्रकार सद्विचार से चारित्र्य शुद्ध होता है और असद्विचार से चारित्र्य अशुद्ध होता है, उसी प्रकार सत्कार्य से परिस्थिति अनुकूल बनती है और असत्कार्य से प्रतिकूल।

विवेकी मनुष्य सदा सतर्क रहेगा, सजग रहेगा, सावधान रहेगा, अपने विचारों का परीक्षण बराबर करता रहेगा, आत्मनिरीक्षण करता रहेगा।

वह जानता है कि उसके मन के कारखाने में क्या हो रहा है, कौन-सी वृत्ति बन रही है, किस समय, कौन-सा गुण ढल रहा है। वह अपने मन के कारखाने के द्वार पर किसी दुष्ट या पाप-विचार को कभी फटकने नहीं देगा। अंकुरित होते ही उसे वह तोड़ फेंकेगा।

विवेकी पुरुष अपने विचारों के गुण-धर्मों के परीक्षण से, आत्मनिरीक्षण से और सक्रिय उदात्त विचारों से अपने चारित्र्य को अति-उत्कृष्ट बना लेता है, भाग्य को उन्नत कर लेता है। वह अपनी बातचीत में बड़ा सतर्क रहता है, कम बोलता है और जब भी

बोलता है, प्रिय और मधुर शब्द ही बोलता है। कभी ऐसा कटु शब्द उच्चारण नहीं करता जिससे किसी की भावनाओं को आघात पहुँचे।

वह धैर्य, सहिष्णुता, दया और विश्व-प्रेम का विकास करता है, सत्य ही बोलने का प्रयत्न करता है। इस प्रकार अपनी वागिन्द्रिय पर नियन्त्रण रखता है। वह नपे-तुले शब्द बोलता है, नपा-तुला लिखता है। इसका प्रभाव लोगों के मानस पर बड़ा अनुकूल और गहरा पड़ता है।

कृति, वाणी और विचार तीनों में वह अहिंसा और ब्रह्मचर्य का पालन करता है, शौच और आर्जव का पालन करता है, सर्वदा चित्त को सन्तुलित रखने और प्रसन्न रखने का प्रयत्न करता है, शुद्ध भाव रखता है तथा कायिक, वाचिक और मानसिक तीनों तपों का आचरण करता है। अपनी कृतियों का नियमन करता है। वह कोई पाप नहीं सोच सकता, कोई दुष्कृत्य नहीं कर सकता।

वह सर्वदा परिस्थितियों को अनुकूल बना लेने का प्रयत्न करता है और उसके लिए अपने को तैयार रखता है। जो सुख-सन्तोष फैलाता है, वह सर्वदा अनुकूल परिस्थिति ही प्राप्त करेगा जिससे स्वयं सुखी और सन्तोषी रहेगा। जो दूसरों के मन को दुःख देगा, वह अवश्य ही विचार-नियम के अनुसार ऐसी प्रतिकूल परिस्थिति निर्माण करेगा जिससे स्वयं भी दुःखी और परेशान रहेगा; इसलिए मनुष्य अपनी ही विचार-पद्धति के कारण अपना स्वभाव और अपनी परिस्थिति स्वयं बनाने वाला होता है।

सद्विचारों के बल पर दुःस्वभाव को सत्स्वभाव में रूपान्तरित किया जा सकता है और सत्कृतियों के बल पर प्रतिकूल परिस्थिति को अनुकूल बनाया जा सकता है।

१२. उच्च विचारों के नियम

जैसा सोचोगे, वैसा बनोगे। आपके विचार जैसे होंगे, वैसा आपका जीवन होगा। अपने विचारों को उन्नत बनाओ। उन्नत विचारों से उन्नत कार्य निष्पन्न होते हैं।

केवल सांसारिक विषयों का चिन्तन करना दुःखमय है। वह विचार-मात्र ही बन्धनकारक होता है। शुद्ध विचार विद्युत्-शक्ति से भी अधिक शक्तिशाली शक्ति है।

जो मन ऐन्द्रिय विषयों से आकृष्ट होता है, वह बन्धन का कारण बनता है और जो उनसे अलिप्त रहता है, वह मुक्ति का कारण बनता है। मन लुटेरा है। इस लुटेरे मन

का ही अन्त करो। इससे तुम सदा सुखी और प्रसन्न रहोगे। मन को जीतने के इस प्रयत्न में अपनी सारी शक्ति लगा दो। यही सच्चा पुरुषार्थ है।

अहन्ता-नाश चित्त की शुद्धि तथा संस्कृति का एक साधन है। मन आहार के अनुरूप बनता है। आहार के सूक्ष्म तत्त्वों से मन बनता है। आहार का अर्थ केवल वह भोजन ही नहीं है जिसे हम खाते हैं, बल्कि वह सब है जो हम अपनी समस्त इन्द्रियों से ग्रहण करते हैं।

भगवान् के सर्वत्र दर्शन करने की कला सीखिए। यही नेत्रों का वास्तविक आहार है। विचार की शुद्धता आहार की शुद्धता पर निर्भर करती है। आप उदात्त दिव्य विचारों को प्रश्रय दे कर सम्यक् दर्शन, सम्यक् श्रवण, सम्यक् आस्वादन तथा सम्यक् चिन्तन कर सकते हैं।

लाल या हरा उपनेत्र (चश्मा) लगा कर किसी वस्तु को देखें, तो वह वस्तु लाल या हरी दिखायी देगी। इसी प्रकार हमारी वासनाएँ मनोदर्पण के द्वारा विषयों को अपना रंग देती हैं। सभी मनोविचार विनाशी हैं, परिवर्तनशील हैं; अतः दुःख और सन्ताप ही देने वाले हैं।

विचार मात्र से मुक्त हो जाओ। पूर्वाग्रहों और धारणाओं की गुलामी को तोड़ दो, जो बुद्धि को कुण्ठित करते और विचारों को निस्तेज बनाते हैं। अमर आत्मा का चिन्तन करो। यह प्रत्यक्ष और मौलिक चिन्तन की ठीक पद्धति है। विचारों के शुद्ध होते ही आत्मा स्वयं प्रकट होने लगती है। जब मन कामना से सर्वथा मुक्त और शान्त होता है, जब उसमें कोई आकांक्षा, कोई इच्छा या कोई विचार नहीं रहता, किसी प्रकार का दबाव, आशा और अपेक्षा नहीं रहती, तब परमात्मा विभासित होने लगता है। तब आनन्द का अनुभव होगा। सन्तों के चरण-चिह्नों पर चलो, उनका-सा जीवन जियो। यह विचार-जय का एकमात्र उपाय है, मनोजय का एकमात्र साधन है, निम्न प्रकृति पर विजय का एक सम्बल है। जब तक मन को जीत नहीं लोगे, तब तक स्थायी और निश्चित विजय असम्भव है।

१३. विचार : एक प्रत्यावर्ती अस्त्र

अपने विचारों के प्रति सावधान रहो। अपने मन से जो-कुछ भी आप बाहर भेजते हैं, वही लौट कर आने वाला है। जो भी सोचते हैं, वही प्रत्यावर्ती अस्त्र है।

किसी से घृणा करोगे, तो घृणा ही आपके पास लौट आयेगी। औरों से प्रेम करोगे, तो प्रेम ही वापस आपको मिलेगा।

कोई भी दुष्ट विचार मनुष्य को त्रिधा आघात पहुँचाता है : पहला, विचार करने वाले पर आघात आता है; क्योंकि उसके मानस को दूषित करता है; दूसरा, उस पर आघात करता है जिसे उस विचार का शिकार या विषय बनाया जाता है और तीसरा, समस्त मानव-जाति पर आघात करता है; क्योंकि उससे विश्व-व्यापी जो मानस-क्षेत्र है वही कलुषित होता है।

प्रत्येक दुष्ट विचार एक तलवार के समान सामने वाले पर असर करता है। यदि आपने किसी के प्रति द्वेषयुक्त विचार किया तो वास्तव में आपने उसकी हत्या ही की। फिर आप भी आत्महत्या करते हैं; क्योंकि वही विचार लौट कर वापस आप पर ही आ पड़ता है।

कुविचारों से अधिकृत मन बिलकुल लौह चुम्बक के समान दूसरों से वैसे विचारों को आकर्षित कर लेता है और इस तरह से मूलभूत दोष या पाप को तीव्र बनाता है।

जो कुविचार मानस-वातावरण में फैलाया जाता है, वह ग्रहणशील मन को विषाक्त करता है। दुष्ट विचार से अभिभूत रहने का परिणाम यह होता है कि मन की अपकर्षण-शक्ति क्रमशः कुण्ठित हो जाती है और वह मन उस मनुष्य को तदनुरूप दुष्कृत्य करने के लिए बाध्य करता है।

१४. विचार और सागर-तरंग

विचार सागर की तरंगों के समान हैं। वे असंख्य हैं। उनको जीतने का प्रयत्न करते समय प्रारम्भ में निराशा ही पल्ले पड़ती है। कुछ विचार तो प्रशमित हो जाते हैं; किन्तु कुछ विचार वेगवान् प्रवाह की तरह उमड़-घुमड़ कर बह निकलते हैं। जो पुराने विचार नीचे दबे पड़े हुए थे, वे कुछ समय के बाद पुनः ऊपर आ सकते हैं और अपना जोर दिखा सकते हैं।

अभ्यास की किसी भी स्थिति में निराश न होना। अन्दर से अवश्य ही आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त होगी। अन्ततः आपकी जीत निश्चित है। आज आपको जिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है, हमारे पूर्वज महायोगियों को भी इन सब कठिनाइयों से हो कर गुजरना पड़ा था।

मनोवृत्तियों को नियन्त्रित करने की प्रक्रिया कष्टसाध्य और लम्बी है। एक-आध दिन में ही सभी विचारों को समाप्त करना सम्भव नहीं है। जब बाधाएँ आयें या कठिनाइयाँ उपस्थित हों तो बीच में ही अभ्यास छोड़ न देना, विचार-नाशन का प्रयत्न बराबर जारी रखना।

आपका पहला काम यही होना चाहिए कि आशाओं और आकांक्षाओं को घटाया जाये। पहले अपनी आशाएँ और आकांक्षाएँ कम करो, फिर विचार अपने-आप कम होने लगेंगे। फिर धीरे-धीरे सभी विचार आमूल नष्ट किये जा सकेंगे।

१५. सद्विचारों का रंग और प्रभाव

भगवान् बुद्ध ने कहा—''हम अपने विचारों से ही बने हैं।'' विचारों के ही कारण जन्म-जन्मान्तरों का चक्कर चलता है। हमें सदा अपने विचारों को शुद्ध करने का प्रयास करना चाहिए।

जब किसी महात्मा के सान्निध्य में हम जा कर बैठते हैं तो अन्यादृश शान्ति का अनुभव करते हैं; किन्तु जब किसी स्वार्थी और दुर्जन की संगति में बैठते हैं तो हमें अशान्ति प्रतीत होती है। इसका कारण यही है कि एक महात्मा के प्रभामण्डल से शान्ति और समाधान के स्पन्दन निस्सृत होते हैं जब कि स्वार्थी व्यक्ति से स्वार्थमय दुष्ट विचारों का निस्सरण होता है।

विचारों का दूसरा परिणाम यह है कि उनका एक निश्चित आकार बनता है। विचार के गुण-धर्म पर उस वैचारिक आकार का रंग और स्वच्छता निर्भर है। विचार-स्वरूप एक जीवन-तत्त्व है और उसमें विचारकर्ता के आशयों के निष्पादन की बहुत बलवती प्रवृत्ति होती है।

विचार का नीला स्वरूप भक्ति का द्योतक है। अहं-शून्यता के विचार का स्वरूप अति-मनोहर पाण्डुर आकाश-नील होता है जिसके चारों ओर शुभ्र प्रकाश चमकता रहता है। स्वार्थ, अहंकार और क्रोधमय विचारों का स्वरूप क्रमशः धूसर बभ्रु, नारंग और रक्त वर्ण होता है।

हमारे चारों ओर सदा ये विचार-रूप घिरे रहते हैं और हमारा मन उनसे बहुत ही प्रभावित होता रहता है। जिसे हम अपना विचार कहते हैं, वस्तुतः उसका चौथाई भी हमारा नहीं होता है, यह सब वातावरण से संचित किया हुआ होता है। प्रायः वे

अधिकतर दुष्ट विचार होते हैं; इसलिए सदा मन-ही-मन हमें भगवान् का नाम लेते रहना चाहिए। वह उन विचारों के दुष्प्रभाव से हमारी रक्षा करेगा।

१६. समुन्नत चित्त का प्रभामण्डल और गति-शक्ति

जिनकी चित्त-शक्ति विशेष रूप से प्रबुद्ध और समुन्नत होती है, उनसे हम अत्यन्त तेजस्वी प्रभामण्डल अनुभव करते हैं।

समुन्नत चित्त का प्रत्यक्ष प्रभाव जो अनुन्नत चित्त पर पड़ता है, वह विशेष ध्यान देने योग्य है। पहुँचे हुए महापुरुष के सान्निध्य में प्राप्त होने वाले उस अनुभव का कोई दृष्टान्त दे कर वर्णन करना सम्भव नहीं है।

महापुरुष अपने मुँह से एक शब्द भले ही न बोले, फिर भी उसके पास बैठने मात्र से हमारे मन पर प्रभाव पड़ता है, उससे हम विलक्षण चेतना स्पष्ट अनुभव कर सकते हैं।

मानसिक अथवा मानस-तेज मन के द्वारा प्रस्तुत होता है। तेज वह शुभ्रता या प्रभामण्डल है जो मानस-तत्त्व से निस्सृत होता है। जिन्होंने अपने चित्त का परिपूर्ण विकास साध लिया है, उनमें वह तेज हम अत्यधिक देदीप्यमान देख सकते हैं। उसमें तीव्र गति से संचार करने की अद्‌भुत शक्ति होती है और जिन लोगों को उसके प्रभाव में आने का सद्‌भाग्य प्राप्त है, उन पर कल्याणकारी प्रभाव डालने की भी सामर्थ्य है, भले ही वे कितनी भी दूर हों और कितनी ही संख्या में हों। यह ध्यान में रखने की बात है कि आध्यात्मिक तेज चैतसिक, प्राणिक अथवा मानसिक तेज से कहीं अधिक शक्तिशाली होता है।

१७. विचारों और वृत्तियों की गति-शक्ति

जो उदास और मन्द वृत्ति के लोग हैं, वे अपने ही जैसे उदास और मन्द वृत्ति वाली वस्तुओं और विचारों को दूसरों से तथा स्थूल ईथर में संचित आकाशीय रेकार्डों से आकर्षित करते रहते हैं।

जो मनुष्य आशा, विश्वास और प्रसन्नता से भरे होते हैं, वे दूसरों के इन्हीं गुणों को आकर्षित करते हैं। ऐसे लोग सर्वदा अपने प्रयास में सफल हुआ करते हैं।

निराशा, क्रोध, द्वेष आदि हीन वृत्ति वाले लोग निश्चित रूप से दूसरों का अकल्याण करते हैं। उनकी दुष्ट वृत्तियों की छूत औरों को भी लगती है और उनकी

वृत्तियाँ भी दूषित हो जाती हैं। ये लोग दण्डनीय हैं। विचार-जगत् में इनसे बड़ी हानि होती है।

समाधान और प्रसन्न वृत्ति वाले मनुष्य समाज के लिए वरदान-स्वरूप हैं। वे औरों में भी प्रसन्नता फैलाते हैं।

जैसे किसी सुन्दर युवती के कपोलों पर या नाक पर एक-आध भद्दा घाव हो जाये तो वह समाज में अपना चेहरा ढक कर ही निकला करती है और समाज के अन्य लोगों से मिलना-जुलना नहीं चाहती है। इसी प्रकार आप भी, जब आपके अन्दर उदासी, द्वेष या मात्सर्य-जैसी, दुर्वृत्ति जगी हुई हो, तब मित्रों और समाज के बीच जाना छोड़ दीजिए; क्योंकि आपकी इन वृत्तियों का प्रभाव दूसरों पर पड़ेगा। आप समाज के लिए अभिशाप सिद्ध होंगे।

१८. व्यापक वातावरण से विचार-शक्ति

विचार मनुष्य के मस्तिष्क से बाहर निकल कर उद्भ्रमण करते रहते हैं। भला हो या बुरा, जब विचार मन से बाहर निकलता है, तब मनोभूमि में स्पन्दन निर्माण करता है।

वे दूसरों के मस्तिष्क में भी प्रवेश करते हैं। हिमालय की कन्दरा में बैठा हुआ एक योगी अपने शक्तिशाली विचारों को अमरीका के कोने तक प्रसारित करता रहता है। जो व्यक्ति कन्दरा में बैठ कर अपना चित्त शुद्ध करता है और व्यापक रूप से विश्व की सेवा करता है, उससे जो सद्विचारों का प्रवाह आता है वह उसे ग्रहण करना चाहने वालों के हृदय में प्रवेश करता रहता है, उसे कोई रोक नहीं सकता।

जिस प्रकार सूर्य की किरणें धरती पर बूँद-बूँद पानी को भाप के रूप में बदलती रहती हैं और वह सारी भाप आकाश में पुंजीभूत हो कर मेघ का रूप धारण करती है; उसी प्रकार आप एकान्त में बैठ कर जो सद्विचार की तरंगें उत्पन्न करते हैं, वह आकाश में एकत्रित होती रहती हैं। और भी जो-जो लोग इसी तरह सद्विचार प्रसारित करते हैं, सबके सभी सद्विचार आकाश में एकत्रित होते रहते हैं और समय पर वे अवांछनीय विचारों का दमन करने के लिए अतुल शक्ति के साथ नीचे उतर आते हैं।

तृतीय अध्याय

विचार-शक्ति का मूल्य और उपयोग

१. विचार-स्पन्दन से पर-सेवा

सच्चा संन्यासी या योगी अपने विचार-स्पन्दन के बल पर कुछ भी कर सकता है। उसे किसी संस्था का अध्यक्ष या किसी सामाजिक अथवा राजनैतिक आन्दोलन का नेता बनने की आवश्यकता नहीं है। यह तो नासमझी और बचकाना है।

भारत के लोगों पर आजकल पाश्चात्यों का प्रभाव छाया हुआ है, उनकी मिशनरी भावनाओं से ये प्रभावित हो चले हैं और इसीलिए कहने लगे हैं कि संन्यासियों को बाहर निकलना चाहिए, सामाजिक और राजनैतिक कामों में भाग लेना चाहिए आदि-आदि; परन्तु यह बहुत ही दुःखद भूल है।

संसार का उपकार करने तथा लोक-मानस का उत्थान करने और शिक्षा देने के लिए संन्यासियों को सभामंच पर जाने की कोई आवश्यकता नहीं है।

कई संन्यासी ऐसे हैं जो अपने निज के उदाहरण से संसार को शिक्षा देते हैं। उनका अपना जीवन ही उनकी शिक्षा और उपदेशों का मूर्त रूप होता है। उनका मात्र एक दृष्टिपात सहस्रों व्यक्तियों के मानस का उत्थान करता है।

एक संन्यासी दूसरों के लिए ईश्वर-साक्षात्कार का जीता-जागता आश्वासन है। पावन यात्रियों के दर्शन मात्र से असंख्य लोग स्फूर्ति और प्रेरणा प्राप्त करते हैं।

संन्यासी के विचार-स्पन्दनों को कोई अवरुद्ध नहीं कर सकता। उनके परिशुद्ध तथा प्रबल विचार-स्पन्दन बहुत दूर तक संचार करते, संसार को पावन करते और सहस्रों लोगों के चित्त में प्रवेश करते हैं। इसमें संशय नहीं है।

२. डाक्टर सुझाव दे कर उपचार कर सकते हैं

डाक्टरों को सुझाव देने की विद्या में पारंगत होना आवश्यक है। **निष्ठावान्,** सहानुभूतिपूर्ण डाक्टर बहुत दुर्लभ हैं। जो डाक्टर सुझाव देने की विद्या **नहीं जानते,** वे लाभ पहुँचाने की अपेक्षा हानि ही अधिक करते हैं। वे रोगियों को **अनावश्यक भय** दिखा कर कभी-कभी उन्हें मार भी देते हैं।

किसी को साधारण-सी खाँसी आने लगी तो वे भले आदमी कह देंगे कि तुम्हें तो यक्ष्मा (टी.बी.) हो गया है; तुम्हें भुवाली, वियना या स्विट्ज़रलैण्ड जाना पड़ेगा; बहुत-सी सूइयाँ (इंजेक्शन) लेनी होंगी आदि। बेचारा रोगी घबड़ा जाता है। वस्तुतः वहाँ यक्ष्मा-जैसी कोई बात नहीं है। रोग अत्यन्त साधारण है। ठण्ढ लगने से ज़रा ख़ाँसने लगा है। वास्तव में तो **डाक्टर के हानिकर सुझाव से भय और चिन्ताग्रस्त होने के कारण ही उसे यक्ष्मा रोग लग जाता है।**

डाक्टर को तो कहना चाहिए था कि 'अरे, यह तो कुछ नहीं है। मामूली ठण्ढ **लगी है। कल तक अच्छे हो जाओगे। रेचक औषधि ले** लो और नीलगिरि का का तेल **छाती पर मल लो। भोजन सुधार लो।** यदि एक दिन उपवास कर लो तो और अच्छा **है।' ऐसा डाक्टर** भगवान् के समान होता है, वन्दनीय होता है।

इस पर कोई डाक्टर कह सकता है—"यदि मैं ऐसा करने लगूँ तो मेरा धन्धा कैसे **चलेगा? संसार में कैसे** निर्वाह होगा?" यह भूल है। सत्य की सदा विजय होती है। यदि आप दयावान् होंगे और सहानुभूति दिखाओगे, तो लोग आपके पास दौड़े आयेंगे। आपका धन्धा जोरों से चल निकलेगा।

सुझाव में ही उपचार है। यह औषधि-रहित उपचार है। यह सुझावोपचार है। अच्छे और प्रभावकारी सुझाव से कोई भी रोग दूर किया जा सकता है। इस विज्ञान को आपको सीखना चाहिए और इसका उपयोग भी करना चाहिए। सभी डाक्टरों को, चाहे वे होमियोपैथी के हों या एलोपैथी के, आयुर्वेद के हों या यूनानी के, यह विद्या सीख लेनी चाहिए। वे अपनी उपचार-पद्धति के साथ इसे मिला सकते हैं। इसके कारण उनका काम निरन्तर बढ़ता जायेगा, उन्नति करता जायेगा।

३. योगियों की विचार-संक्रमण की उपदेश-पद्धति

जो योगी आज सभामंचों पर जा कर जनता का जितना कल्याण-साधन करते हैं, उससे कहीं अधिक कल्याण वे अज्ञात सच्चे योगी करते हैं जो एकान्त में रह कर अपनी आध्यात्मिक और तेजस्वी विचार-तरंगों और तेज को प्रसारित करते हैं। सभाएँ करते फिरने वाले और सभामंच पर से उपदेश देने वाले योगी वस्तुतः द्वितीय श्रेणी के लोग हैं जिन्हें न तो अपने अन्दर निहित अलौकिक शक्तियों और तेज **का ज्ञान है और न उनका** वे कभी उपयोग ही करते हैं।

बड़े-बड़े सिद्ध पुरुष और महात्मा लोग अपनी विचार-संचरण-शक्ति के द्वारा संसार के कोने-कोने तक योग्य व्यक्तियों तक अपना सन्देश पहुँचाते हैं। सन्देशवाहन के जो अलौकिक साधन हमारी दृष्टि में अत्यन्त दुर्लभ और असाधारण हैं, वे योगियों के लिए बहुत ही सुलभ और साधारण हैं।

४. विचार का औरों पर प्रभाव

किसी प्रकार की श्रव्य वाणी के बिना ही आप दूसरों पर अपना प्रभाव डाल सकते हैं। इसके लिए संकल्पपूर्वक विचार पर ध्यान केन्द्रित करने की आवश्यकता है। इसे टेलीपैथी (Telepathy) (विचार-संचरण-शक्ति) कहते हैं।

टेलीपैथी के अभ्यास की एक विधि यहाँ दे रहा हूँ। दूर देश में रहने वाले अपने किसी मित्र या बन्धु के विषय में सोचिए। अपने मनःपटल पर उसके चेहरे का स्पष्ट चित्र अंकित कीजिए। यदि आपके पास उसका कोई चित्र हो, फोटो हो, तो उसके साथ बात कीजिए। श्रव्य शब्दों में बोलिए। जब सोने जाइए, तब पूर्ण एकाग्रता से उस चित्र के विषय में सोचिए। अगले दिन या निकट भविष्य में ही उसका पत्र आपके पास पहुँच जायेगा। वह आपको आकांक्षित पत्र लिखेगा। यह परीक्षा कर देखिए। सन्देह मत कीजिए। इसे देख कर आपको आश्चर्य होगा।

टेलीपैथी का शास्त्र सीख लेने पर जीवन में सफलता ही सफलता है और इस विद्या में विश्वास सुदृढ़ हो जाता है। प्रायः ऐसा होता है कि आप कुछ लिख रहे हैं अथवा कोई समाचार-पत्र या कुछ पढ़ रहे हैं तो तुरन्त आपके मन में किसी की बात याद आ जाती है, किसी घनिष्ठ मित्र या बन्धु के विषय में आप सोचने लग जाते हैं। इसका कारण यही है कि उसने आपके विषय में गम्भीरता से सोचा है, अपना सन्देश आपके पास भेजा है।

विचार-तरंगें प्रकाश और विद्युत् से भी तेज गति से दौड़ती हैं। इस तरह से उन सन्देशों को हमारा अवचेतन मन ग्रहण कर लेता है और चेतन मन तक पहुँचा देता है।

५. विचार-शक्ति के विविध उपयोग

विचार-शक्ति का शास्त्र बड़ा रोचक है, बड़ा सूक्ष्म है। भौतिक सृष्टि की तुलना में यह विचार-सृष्टि अधिक वास्तविक है।

विचार की शक्ति अत्यन्त महान् है। आपका प्रत्येक विचार किसी-न-किसी रूप में आपके लिए अक्षरशः मूल्य रखता है। आपके शरीर का बल, आपका मनोबल, जीवन में आपकी सफलता, आपका आनन्द और आपकी संगति में दूसरों को प्राप्त होने वाला आनन्द—यह सब-का-सब आपके विचारों के स्वरूप और गुणों पर निर्भर है। विचार-संस्कार की विधि आपको जान लेनी चाहिए और अपनी विचार-शक्ति का संवर्धन करना चाहिए।

६. विचार-शक्ति का मूल्य

यदि आप ठीक से जान लें कि विचार-स्पन्दन किस प्रकार काम करता है, यदि आप समझ लें कि विचारों के नियमन की पद्धति क्या है, यदि आप सीख लें कि विचारों को स्पष्ट सुनिश्चित शक्तिशाली विचार-तरंगों के रूप में दूरस्थ व्यक्तियों तक कैसे प्रेषित किया जाता है, तो सहस्रगुना अधिक सफलता के साथ विचार-शक्ति का उपयोग आप कर सकेंगे। विचार-शक्ति चमत्कारी है।

गलत विचार बन्धनकारक है। यही विचार मोक्षकारी है। अतः सही विचार करो और मुक्ति प्राप्त करो। चित्त-शक्ति को जान लो तथा अनुभव कर लो और अपने अन्दर छिपी हुई रहस्यमयी शक्ति को उद्घाटित करो।

आँखें बन्द कर लो। धीरे-धीरे धारणा करो। दूर-दूर के पदार्थों को देख सकोगे, दूर-दूर का शब्द सुन सकोगे। संसार के ही नहीं वरंच दूसरे ग्रहों के भी किसी भी भाग में अपना सन्देश भेज सकोगे। दूर बैठे सहस्रों मील दूर रहने वाले रोगी का उपचार कर सकोगे और दूर-दूर तक तत्क्षण पहुँच जाओगे।

चित्त-शक्ति पर विश्वास करो। रुचि हो, अवधान हो, इच्छा हो, श्रद्धा हो और एकाग्रता हो तो वांछित फल अवश्य मिलेगा। स्मरण रहे कि यह चित्त तो माया के द्वारा आत्मा से ही उत्पन्न हुआ है।

७. विचार महान् कार्य-साधक हैं

आप जहाँ हैं वहीं से अपने मित्र के संकट के समय अपने सान्त्वनादायक विचारों के द्वारा उसकी सहायता कर सकते हैं। मित्र को उसके सत्यशोधन में आप अपने विचारों से और अपने ज्ञात स्पष्ट और निश्चित सत्य से सहायता दे सकते हैं।

आप अपने विचार अनन्त मनोजगत् में प्रेषित कर सकते हैं, जो सभी संवेद्य व्यक्तियों तक पहुँच कर उनका उत्थान कर सकते हैं, उन्हें पावन कर सकते हैं और प्रेरणा दे सकते हैं।

यदि आप अपने स्थान से किसी दूसरे स्थान को प्रेमपूर्ण और सहायक विचार किसी अन्य व्यक्ति के पास भेजते हैं तो वह आपके मस्तिष्क से निकल कर सीधे उस व्यक्ति के पास पहुँचता है, उसके मन में भी वैसे ही विचार जाग्रत करता है और द्विगुणित शक्ति के साथ आपके पास लौट आता है।

यदि आप दूसरे के पास घृणा और द्वेष के विचार भेजते हैं तो वे उसे दुःखी करेंगे और द्विगुणित शक्ति के साथ लौट कर आपको भी दुःख देंगे।

इसलिए विचार के नियमों को जान लीजिए और अपने में दया, प्रेम तथा करुणा के सद्विचारों को जगाइए और सर्वदा प्रसन्न रहिए।

यदि किसी के पास उसकी सहायता के लिए आप कोई उपयोगी विचार भेजते हैं तो वह निश्चित, विधायक और सोद्देश्य होना चाहिए। तभी वह अभीष्ट परिणाम लायेगा, सफल होगा।

८. प्रेरक विचार

सुझाव की तथा मन पर होने वाले उसके प्रभावों की सही-सही जानकारी कर लीजिए। किसी को परामर्श देते समय पूरे सावधान रहिए। किसी को ऐसा परामर्श न दीजिए जिससे किसी की भी हानि होती हो, ऐसा परामर्श देने से आप उसका बहुत बड़ा अकल्याण तथा अहित करेंगे। सर्वदा मुँह से कुछ बोलने से पहले सोच-विचार कर लीजिए।

शिक्षकों और अध्यापकों को परामर्श तथा आत्म-संकेत-विज्ञान को भली-भाँति समझ लेना चाहिए। तभी वे अपने छात्रों को दक्षतापूर्वक शिक्षण दे सकेंगे और उनकी उन्नति कर सकेंगे।

दक्षिण में रोते बच्चों को चुप करने के लिए अक्सर माता-पिता यही कहा करते हैं कि 'देखो, हाबू आया (दो आँखों वाला आ गया)। चुप हो जा, नहीं तो तुम्हें उसके हाथों पकड़ा दूँगा', 'भूत आ गया' आदि। ऐसी सब बातें बड़ी आपत्तिजनक होती हैं। इससे बच्चे कायर हो जाते हैं।

बच्चों का मन बड़ा कोमल, ग्रहणशील और संस्कारक्षम होता है। उस आयु में पड़ने वाले संस्कार अमिट होते हैं। बड़े हो जाने के बाद इन बाल्यकाल के संस्कारों को बदलना या मिटाना सरल नहीं होता। इस भाँति भय के वातावरण में पले शिशु बड़े होने पर बहुत ही डरपोक और कायर बनते हैं।

बच्चों के मन में सदा साहस और उत्साह भरना चाहिए। उनसे कहना चाहिए, 'यह शेर देखो। चित्र में कैसे खड़ा है। तुझे भी उसकी तरह बहादुर बनना चाहिए, उसी की तरह दहाड़ना चाहिए। शिवाजी, अर्जुन तथा क्लाइव का चित्र देखो। तुझे भी वैसा ही पराक्रमी और शूर बनना चाहिए।'

पाश्चात्य देशों में शिक्षक छात्रों को युद्ध के चित्र दिखाया करते हैं और कहते हैं—'यह देख जेम्स! नेपोलियन का यह चित्र देख! देख, कैसा बहादुर है! तू भी बड़ा हो कर बड़ा सेनापति बनना।' इससे बच्चों के मन में बचपन से ही वीरता की वृत्ति पनपने लगती है। बड़े होने पर उनके ये संस्कार बाह्य प्रोत्साहन पा कर और भी अधिक बलवान् होते हैं।

९. विचार संचारित करना सीखें

टेलीपैथी का अभ्यास आरम्भ में निकट से करो। प्रारम्भ करने की दृष्टि से रात्रि के समय अभ्यास करना अधिक उपयुक्त रहेगा।

अपने मित्र से कहो कि ठीक दश बजे एकाग्र हो कर विचार-ग्रहण करने की मनोभूमिका बनाये। उससे कहो कि अँधेरे कमरे में वज्रासन या पद्मासन लगा कर आँखें बन्द करके बैठ जाये।

ठीक निर्धारित समय पर आप अपने यहाँ से उसे सन्देश भेजने का प्रयत्न करो। जो सन्देश भेजना चाहो, उस पर मन को केन्द्रित करो। अब जोरों से उसका संकल्प करो। विचार आपके मस्तिष्क से निकल कर आपके मित्र के मस्तिष्क में प्रवेश करेंगे।

आरम्भ में कहीं-कहीं कोई भूल रह सकती है। ज्यों-ज्यों अभ्यास बढ़ाओगे और उसकी प्रक्रिया को ठीक से समझ लोगे, फिर सदा सन्देश ठीक से भेज सकोगे और ग्रहण भी कर सकोगे।

कालान्तर में आप संसार के किसी भी भाग में अपना सन्देश भेजने में सक्षम हो जाओगे। विचार-तरंगों की शक्ति और दृढ़ता भिन्न-भिन्न प्रकार की होती है। भेजने

वाले और ग्रहण करने वाले दोनों को बड़ी दृढ़ता के साथ एकाग्रता का अभ्यास करना होता है। तब पूरी शक्ति से सन्देश भेज सकोगे और स्पष्टता के साथ यथातथ रूप से सन्देश ग्रहण भी कर सकोगे। प्रारम्भ में घर के अन्दर ही एक कमरे से दूसरे कमरे तक टेलीपैथी का अभ्यास करें।

यह विद्या बड़ी मनोरंजक है। इसके लिए धैर्य के साथ अभ्यास करने की आवश्यकता है। ब्रह्मचर्य बहुत आवश्यक है।

१०. परामनोविज्ञान और अवचेतन मन

पावन गंगा हिमालय की गंगोत्तरी से आविर्भूत होती है और अविराम गति से गंगासागर की ओर प्रवाहित होती रहती है, उसी प्रकार विचार-प्रवाह भी संस्कारों के नितल में जन्म लेते हैं जो मन के आन्तर स्तरों में सुप्त हैं, जहाँ सूक्ष्म वासनाएँ दबी पड़ी हैं और जागृति तथा स्वप्न दोनों अवस्थाओं में अविश्रान्त रूप से विषयों की ओर दौड़ते रहते हैं। रेल का इंजन जब सीमा से अधिक गरम हो जाता है, तब ठण्ढा होने के लिए छादक (Shed) में भेज दिया जाता है, जहाँ वह आराम से रह कर पूर्व-स्थिति प्राप्त करता है, किन्तु मन का यह रहस्यमय इंजन पल-भर भी आराम किये बिना निरन्तर विचार में संलग्न रहता है।

टेलीपैथी का अभ्यास, विचार-वाचन, इन्द्रजाल, सम्मोहन और चैतसिक उपचार—इन सबसे सिद्ध होता है कि मन का अस्तित्व है और एक उन्नत मन निचले मन पर अपना प्रभाव डाल सकता है और उसे अपने अधीन कर सकता है। स्वयंचालित लेखन तथा सम्मोहन से प्रभावित मनुष्य को देखने से यह सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि मनुष्य में एक अवचेतन मन भी है जो चौबीसों घण्टे अविश्रान्त काम करता रहता है। आध्यात्मिक साधना द्वारा उस अवचेतन मन के विचार को रूपान्तरित कर डालो और मन को मोड़ दो और नया मानव बनो।

११. तेजस्वी दिव्य विचारों की शक्ति

विचार ही जीवन है। जैसा सोचेगे, वैसा ही आपके व्यक्तित्व का गठन होगा। आपके विचार ही आपका वातावरण बनाते हैं। आपके विचार ही आपके संसार की रचना करते हैं। स्वस्थ विचार किया करोगे तो स्वस्थ रहोगे। यदि मन में रुग्णता के विचार, रुग्ण स्नायु-जाल के विचार, दुर्बल चेता का विचार, अन्तस्त्य अंगों के सुचारु

रूप से संचालन न करने का विचार बनाये रखोगे तो आप अच्छे स्वास्थ्य, सौन्दर्य समाधान की कभी अपेक्षा नहीं रख सकते हो।

याद रखो कि यह शरीर मन से बना है और मन के ही अधीन है।

यदि तेजस्वी विचार करते रहोगे तो शरीर भी तेजस्वी होगा। प्रेम, शा सन्तोष, पवित्रता, पूर्णता और दिव्यता के विचार आपको तथा आपके आस-पार लोगों को भी पूर्ण और दिव्य बना देंगे। इसलिए दिव्य विचारों का अर्जन करो।

चतुर्थ अध्याय

विचार-शक्ति के कार्य

१. विचार स्वास्थ्य-संवर्धक है

शरीर अन्दर से मन से सम्बन्धित है; बल्कि यही कहना ठीक होगा कि शरीर मन का ही प्रतिरूप है, अगोचर सूक्ष्म मन का यह गोचर स्थूल रूप है। दाँत में, पेट में या कान में कहीं जरा-सा कष्ट हुआ कि फौरन मन उससे प्रभावित होता है। वह ठीक से सोच नहीं पाता; चिन्तित, क्षुब्ध और अशान्त हो जाता है।

जब मन उद्विग्न हो जाता है, तब शरीर भी ठीक से काम नहीं कर पाता। शरीर को क्लेशित करने वाली पीड़ाएँ 'व्याधि' कहलाती हैं तथा मन को क्लेशित करने वाली वासनाओं को 'आधि' नाम से अभिहित किया जाता है।

शारीरिक स्वास्थ्य की अपेक्षा मानसिक स्वास्थ्य अधिक आवश्यक है।

मन स्वस्थ रहा तो शरीर भी अवश्य स्वस्थ रहेगा। मन पवित्र रहा, विचार शुद्ध रहे तो सभी प्रकार की आधि और व्याधि से मुक्त रहोगे। फिर स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन रहेगा।

२. विचारों से व्यक्तित्व-निर्माण

उदात्त विचारों से मन उन्नत और हृदय विशाल होता है। असद् विचार से मन उत्तेजित होता है तथा भावनाएँ दूषित और स्थूल होती हैं।

जिनमें विचार और वाणी का नियमन करने की अल्प-सी भी शक्ति है उनका चेहरा शान्त, गम्भीर, सुन्दर और आकर्षक रहेगा, उनकी वाणी मधुर होगी और उनकी आँखें उज्ज्वल और कान्तियुक्त होंगी।

३. शरीर पर विचारों का प्रभाव

प्रत्येक विचार, प्रत्येक भावना अथवा प्रत्येक शब्द शरीर के कोषों में प्रबल स्पन्दन पैदा करता है और उसका संस्कार गहरा पड़ता है।

विपरीत विचार जगाने की पद्धति आप जान लो तो आपका जीवन सुखी, समाधानपूर्ण, शान्त और शक्तियुक्त होगा। प्रेम का विचार तुरन्त द्वेष के विचार को निष्फल बना देता है। साहस और वीरता का विचार भयग्रस्त विचारों पर तत्काल रामबाण औषध का काम करता है।

४. विचार-शक्ति भाग्य-विधाता है

मनुष्य विचार का बीज बोता है और कृति-रूपी फल पाता है। कृति-रूपी बीज बोता है और अभ्यास-रूपी फल पाता है। अभ्यास-रूपी बीज बोता है और चारित्र्य-रूपी फल पाता है। चारित्र्य-रूपी बीज बोता है और भाग्य-रूपी फल पाता है।

मनुष्य अपने विचारों और कृतियों से स्वयं अपना भाग्य निर्माण करता है। वह अपना भाग्य बदल सकता है। इसमें कोई शंका नहीं है कि वह अपने भाग्य का स्वामी है। सद्विचारों और प्रबल पुरुषार्थ से वह अपने भाग्य का स्वामी बन सकता है।

कुछ मूढ़ जन कहते हैं—'कर्म ही सब-कुछ है। कर्म ही भाग्य है। यह कर्म-विधान है कि आज मैं इस हालत में पड़ा हूँ। फिर मैं क्यों प्रयत्न के झंझट में पड़ूँ? यह तो मेरा भाग्य ही है।'

यह भाग्यवाद है। इससे अकर्मण्यता, जड़ता और दुःख बढ़ते हैं। इसमें कर्म-सिद्धान्त का नितान्त अज्ञान है। यह एक भ्रान्तिकारी तर्क है। विवेकी मनुष्य कभी ऐसा प्रश्न नहीं पूछेगा। आप ही ने अपने विचारों और अपनी कृतियों के द्वारा अपना भाग्य बनाया है।

अभी भी चुनने की पूरी छूट आपको है। कृति-स्वातन्त्र्य आपको है। दुर्जन हमेशा के लिए दुर्जन नहीं होता। उसे सन्त जनों की संगति में रहने दो। समय पर वह बदल जायेगा। तब वह दूसरे प्रकार से सोचने और दूसरे ही ढंग से काम करने लगेगा। उसका स्वभाव बदल जायेगा। वह सन्त बन जायेगा।

डाकू रत्नाकर महर्षि वाल्मीकि बन गया। जगाई और मधाई बदल गये। ये दोनों निम्नतम कोटि के दुष्ट थे। आप चाहें तो ज्ञानी या योगी बन सकते हैं। आप अपना भाग्य बना सकते हैं। आप स्वेच्छा से अपना कर्म चाहे जैसा कर सकते हैं। विचार-शक्ति का उपयोग कीजिए। सम्यक् विचार करें, उदात्त विचार करें। आपको केवल विचार करना है, केवल कृति करनी है। सम्यक् विचार, सम्यक् आकांक्षा और सम्यक् कृति से आप

योगी बन सकते हैं, चाहें तो लखपति बन सकते हैं। सद्विचार और सत्कर्म द्वारा आप इन्द्र-पदवी प्राप्त कर सकते हैं, चाहें तो ब्रह्मलोक पा सकते हैं। मनुष्य असहाय प्राणी नहीं है। उसके पास स्वतन्त्र इच्छा-शक्ति है।

५. मानसिक अव्यवस्था का कारण : विचार

हमारे प्रत्येक विचार-परिवर्तन से मनोदेह में स्पन्दन निर्माण होता है और जब वह भौतिक शरीर में प्रसारित होता है तब दिमाग की विभिन्न नाड़ियों में सक्रियता पैदा होती है। इस सक्रियता के कारण उन कोषों में अनेक वैद्युतिक और रासायनिक परिवर्तन होने लगते हैं। इन सभी परिवर्तनों का मूल कारण विचार-तरंग है।

अत्यन्त उद्वेग, द्वेष, दीर्घकालिक कट्टर मत्सर, संक्षारक चिन्ता, भयंकर क्रोधावेश—इन सबसे शरीर के कोष उद्ध्वस्त हो जाते हैं, जिसके परिणाम-स्वरूप हृदय, यकृत, गुर्दे, फुप्फुस और पेट की बीमारियाँ होती हैं।

यह ध्यान रखना बहुत उपयोगी है कि शरीर में स्थिर समस्त कोषों का बनना-बिगड़ना, प्राणवान् बनना या निष्प्राण बनना सब मन में प्रवेश करने वाले विचारों पर निर्भर है और यह निश्चित है कि हम जैसा सोचते हैं, उसी के अनुरूप हम बनते हैं।

जब मन अमुक एक विचार की ओर मुड़ता है और उसी में रमता है, तब उसमें से एक निश्चित स्पन्दन निर्माण होता है और अक्सर जब यह स्पन्दन पुनः-पुनः होने लगता है तो उसकी आदत-सी पड़ जाती है, फिर अपने-आप चलने लगता है। तब शरीर उसका अनुगामी बनता है और उसमें परिवर्तन होने लगते हैं। यदि हम विचारों पर एकाग्रता साध लें तो हमारी दृष्टि स्थिर हो जाती है।

६. वातावरण-निर्माता : विचार

प्रायः कहा जाता है कि मनुष्य अपनी परिस्थितियों का परिणाम है। यह वास्तविक नहीं है। इस पर विश्वास नहीं किया जा सकता, क्योंकि सर्वदा का अनुभव इसके विपरीत है। संसार के अधिकांश महापुरुष दारिद्र्य और प्रतिकूल परिस्थितियों में ही पले हैं।

कई तो ऐसे हैं जिन्होंने गन्दी बस्तियों और घृणित प्रदेशों में जन्म लिया, परन्तु संसार के उच्चतम स्थान में पहुँच गये। वे विश्वविख्यात हुए, उच्चकोटि के राजनीतिज्ञ, साहित्यकार और कवि हुए तथा अत्यन्त प्रतिभावान् और संसार के दीप-स्तम्भ बने। यह सब कैसे हुआ?

सर टी. मुत्तुस्वामि अय्यर ने जो मद्रास के उच्चन्यायालय के प्रथम भारतीय जज थे, उन्होंने एकदम गरीब परिवार में जन्म लिया। रात को उन्हें सड़क की बत्ती के नीचे पढ़ना पड़ा। भरपेट खाने को नहीं मिलता था। तन ढकने के लिए पर्याप्त कपड़ा नहीं था। उन्होंने कठोर संघर्ष किया और महान् बने। उन्होंने अपनी विपरीत परिस्थितियों से जूझते-जूझते अपने मनोबल और लौह संकल्प-शक्ति के द्वारा उन्नति की।

पश्चिम में ऐसे कई मछुआरों और चमारों के बच्चे अत्युन्नत पद पर पहुँच गये। जो बच्चे सड़कों पर बूट पालिश करते थे, होटलों में शराब बेचते थे और खाना पकाते थे, वे ही महान् कवि और योग्य पत्रकार बन गये।

जानसन की परिस्थिति अत्यन्त प्रतिकूल थी। गोल्डस्मिथ 'साल-भर में ४० पाउण्ड कमाने वाला धनी' था। सर वाल्टर स्काट जन्मजात दरिद्र था। उसे रहने को स्थान नहीं था। जैम्स रैम्ज़े मैक्डोनाल्ड का जीवन तो उल्लेखनीय है। वह बड़ा पुरुषार्थी था। नितान्त दारिद्र्य से वह अत्युच्च अधिकार पर जा पहुँचा। श्रमिक वर्ग से उन्नति कर वह प्रधानमन्त्री बना। आरम्भ में उसने लिफाफे पर पते लिखने का काम किया था जिससे सप्ताह-भर में दश शिलिंग कमायी होती थी।

वह इतना निर्धन था कि चाय नहीं खरीद सकता था, केवल पानी पी कर रहता था। कई महीनों तक दिन-भर में केवल तीन पेन्स का भुना हुआ मांस का टुकड़ा खा कर वह निर्वाह करता रहा। वह छात्राध्यापक था। राजनीति और विज्ञान में उसने विशेष रुचि ली। वह एक पत्रकार था। सम्यक् पुरुषार्थ करते-करते प्रधानमन्त्री के पद तक उसने उन्नति की।

श्री शंकराचार्य, जो कि अद्वैतदर्शन के महान् व्याख्याता हैं, आध्यात्मिक क्षेत्र के प्रचण्ड पुरुष हैं, अद्वितीय प्रतिभासम्पन्न हैं, एक निपट दरिद्र परिवार में जन्मे, सर्वथा अभावग्रस्त प्रतिकूल परिस्थितियों में पले और विपरीत वातावरण में ही बड़े हुए। इस प्रकार के सहस्रों निदर्शन मिलते हैं।

इससे यह स्पष्ट है कि चाहे जितनी प्रतिकूल परिस्थिति क्यों न हो, वह मनुष्य की स्वाभाविक प्रतिभा और महत्ता को तथा उसके उज्ज्वल भविष्य को नष्ट नहीं कर सकती, कुण्ठित नहीं कर सकती। प्रत्येक मनुष्य धैर्य से, अध्यवसाय से, सच्चाई और

ईमानदारी से, पूर्ण हार्दिकता से अपने लक्ष्य के प्रति निष्ठा रखते हुए प्रबल संकल्प और दृढ़ निश्चय से प्रयत्न करे तो चाहे जैसी परिस्थिति में रह कर भी उन्नति कर सकता है, ऊँचा उठ सकता है।

प्रत्येक मनुष्य अपने संस्कारों के साथ जन्म लेता है। चित्त 'कोरा कागज' नहीं है। उस पर विगत जन्म के विचार और कृतियों के संस्कार अंकित रहते हैं। संस्कार अत्यन्त बलवान् होते हैं। सत्संस्कार मनुष्य की अमूल्य सम्पत्ति है। भले ही मनुष्य प्रतिकूल परिस्थितियों में पड़ गया हो, फिर भी ये संस्कार उसे अवांछित और विकृत दुष्प्रभावों से बचाते हैं तथा उसकी उन्नति और विकास में सहायक होते हैं।

कोई भी सुअवसर हाथ से जाने न दो। सभी अवसरों का सदुपयोग करो। प्रत्येक अवसर आपके उत्थान और विकास के लिए आता है। मार्ग में कोई बीमार असहायावस्था में पड़ा मिले तो उसे बाँहों में ले लो, निकटस्थ किसी अस्पताल तक पहुँचा दो। उसकी सेवा करो। दूध पिलाओ, चाय या काफी दो, उसके पैर दबाओ। उसे ईश्वर समझ कर यह सारी सेवा करो।

उसमें बसे हुए सर्वव्यापी सर्वान्तर्वासी, अन्तर्यामी, सर्वानुप्रविष्ट परमेश्वर के दर्शन करो। उसके विभापूर्ण नेत्रों में, उसके क्रन्दन में, उसकी साँस में, उसकी नाड़ी के स्पन्दन में और सीने की धड़कन में दिव्यता के दर्शन करो।

भगवान् ने आपको यह अवसर इसीलिए दिया है कि आप अपनी करुणा और प्रेमभाव बढ़ा सको, अपना चित्त शुद्ध कर सको, घृणा मिटा सको, द्वेष और ईर्ष्या को हटा सको। यदि आप भीरू हो तो कभी-कभी भगवान् आपके आगे ऐसी परिस्थिति रख देगा, जहाँ आपको साहस दिखाना पड़े और अपने प्राणों को खतरे में डाल कर अपनी सूझ का परिचय देना पड़े। जितनी भी विश्व-विभूतियाँ हैं, जागतिक ख्याति के महापुरुष हैं, वे अपने जीवन में प्राप्त प्रत्येक अवसर का सदुपयोग करके ही महान् हुए। भगवान् सुयोग दे कर मनुष्य को आकार दिया करता है, उसके मन को तराशता है।

याद रखो, आपकी दुर्बलता के पीछे बड़ी शक्ति है; क्योंकि आप सदा विपत्ति से बचने के लिए सजग रहते हो। निर्धनता के अपने गुण हैं। निर्धनता से नम्रता, शक्ति, धैर्य, सहिष्णुता आदि गुण बढ़ते हैं और विलास से आलस्य, अहंकार, दौर्बल्य, निष्क्रियता तथा नाना प्रकार की बुरी आदतें पड़ती हैं।

इसलिए प्रतिकूल परिस्थिति देख कर दुःख मत करो। अपने मन से अपना ही विश्व और अपना ही वातावरण रचो। जो व्यक्ति विपरीत परिस्थितियों और प्रतिकूल अवस्थाओं में आगे बढ़ने का प्रयत्न करता है, वह वास्तव में बड़ा बलशाली है। उसे कोई हिला नहीं सकता। वह लौह पुरुष होगा। उसकी रग-रग मजबूत होगी, नस-नस शक्तिशाली होगी।

मनुष्य परिस्थितियों अथवा वातावरण का दास नहीं है। वह अपनी शक्ति, सामर्थ्य, क्षमता, सच्चारित्र्य, सद्विचार, सत्कार्य और सत्पुरुषार्थ से उनका नियमन कर सकता है अथवा उन्हें बदल सकता है। तीव्र पुरुषार्थ तो भाग्य को भी बदल सकता है। यही कारण है कि महर्षि वसिष्ठ और भीष्म ने भाग्य से बड़ा स्थान पुरुषार्थ को दिया; इसलिए भाइयो, पुरुषार्थी बनें, प्रकृति पर विजय प्राप्त करें और सच्चिदानन्द परमात्मा में आनन्द भोगें।

७. विचार : देह का रचयिता

यह शरीर और इसके ये सारे अंग विचार के अतिरिक्त कुछ नहीं हैं। चित्त शरीर का चिन्तन करने लगता है तो शरीर का निर्माण होता है, फिर वह उसी में जा बसता है, उसी से आवृत रहता है।

यह शरीर मन का ही बना हुआ ढाँचा है, जो उसने अपने आनन्द के लिए, अपनी शक्ति को चरितार्थ करने के लिए और शरीरगत पाँचों ज्ञानस्रोतों द्वारा—ज्ञानेन्द्रियों द्वारा—विश्व के विभिन्न अनुभव प्राप्त करने के लिए बनाया है। वस्तुतः यह शरीर तो हमारे विचार, वृत्तियों, धारणाओं और भावनाओं का साकार रूप है, चर्मचक्षु द्वारा ग्राह्य स्वरूप है।

प्रत्येक शरीर का स्थान मन में ही है। क्या जल के बिना उपवन पनप सकता है?

मन ही शरीर का समस्त व्यवहार करने वाला साधन है और वह सबसे बड़ा है। यह स्थूल शरीर एक बार मिट्टी में मिल सकता है, लेकिन मन तुरन्त ही दूसरा एक शरीर अपने लिए गढ़ लेता है। मन यदि स्तब्ध हो जाये, तो यह शरीर हमारी प्रज्ञा को प्रकट नहीं कर पायेगा।

संसार के अधिकांश लोगों का विचार उनके शरीर के अधीन हो गया है। उनका चित्त बहुत अल्प विकसित है। वे बहुधा अन्नमय-कोश में जीते हैं। इसलिए आप

विज्ञानमय-कोश का विकास करें और विज्ञानमय-कोश (बुद्धि) के द्वारा मनोमय-कोश (मन) को नियन्त्रित करें।

आपके मन में ये जो विकृत विचार हैं कि आप शरीर हैं, वे ही सारी बुराइयों के मूल कारण हैं। आप गलत विचारों द्वारा शरीर से आत्मभाव पैदा करते हैं। आपमें देहाध्यास जागता है। शरीर से आप आसक्त हैं। यह 'अभिमान' है। इससे 'ममता' (मेरापन) पैदा होती है। आप अपना सम्बन्ध पत्नी, पुत्र, गृह आदि से जोड़ते हैं। यह सम्बन्ध और यह आसक्ति ही आपके बन्धन का, दुःख का और कष्टों का मूल कारण है।

पंचम अध्याय

विचार-शक्ति का विकास

१. नैतिक शुद्धि से विचार-शक्ति

जो मनुष्य सदा सत्यवादी है, नैतिक दृष्टि से पवित्र और परिशुद्ध है, उसकी विचार-शक्ति अधिक बलशाली होती है। जिसने दीर्घकालीन अभ्यास के द्वारा क्रोध को जीत लिया है, उसके अन्दर अत्यन्त प्रबल विचार-शक्ति होती है।

ऐसी शक्तिशालिनी विचार-शक्ति से सम्पन्न योगी यदि एक ही शब्द बोलता है, तो भी उसका अद्भुत परिणाम लोक-मानस पर होता है।

सच्चाई, निष्ठा, उद्यमशीलता आदि सद्गुण विचार-शक्ति संचित करने के सर्वोत्कृष्ट साधन हैं। पवित्रता हमें ज्ञान और अमृतत्व की ओर ले जाती है। पवित्रता दो प्रकार की है—आन्तरिक और बाह्य, मानसिक और शारीरिक।

मानसिक शुद्धि विशेष महत्त्वपूर्ण है। शारीरिक शुद्धि भी आवश्यक है। आन्तरिक मनःशुद्धि के कारण चित्त की प्रसन्नता, मन की एकाग्रता, इन्द्रियों पर विजय और आत्मसाक्षात्कार की योग्यता प्राप्त होती है।

२. एकाग्रता से विचार-शक्ति

मनुष्य के विचारों की शक्ति की कोई सीमा नहीं है। मनुष्य अपने मन को जितना एकाग्र करता जाता है, उतनी ही उसकी अवधान-शक्ति बढ़ती जाती है।

सांसारिक विषयों में फँसे हुए व्यक्ति के मन की किरणें विकीर्ण हो जाती हैं। नाना दिशाओं में बह कर चित्त-शक्ति का अपव्यय होता है। एकाग्रता की साधना के लिए इन सब बिखरी हुई शक्तियों को अभ्यास द्वारा केन्द्रित करना होता है और फिर मन को ईश्वर की ओर मोड़ना होता है।

अवधान का अभ्यास करो तो अच्छी एकाग्रता सिद्ध होगी। शान्त चित्त ही एकाग्रता साध सकता है; अतः मन को शान्त रखो; सदा प्रसन्न रहो; तभी एकाग्रता पा सकोगे। एकाग्रता की साधना नियमतः करो। एक ही स्थान पर, एक ही समय अर्थात् प्रातः ४ बजे प्रतिदिन अभ्यास करो।

ब्रह्मचर्य, प्राणायाम, सादगी, सक्रियशीलता का न्यूनीकरण, अनुद्वेग, मौन, एकान्त, इन्द्रियनिग्रह, जप, क्रोधजय, उपन्यास तथा समाचार-पत्र आदि के वाचन का त्याग, सिनेमा न देखना—ये सब एकाग्रता के अभ्यास में सहायक हैं।

अत्यधिक शरीर-श्रम, बहुत बोलना, अपरिमित भोजन, सांसारिक लोगों से विशेष मिलना-जुलना, अत्यधिक भ्रमण, असीम विषय-भोग—ये सब एकाग्रता की साधना में बाधक हैं।

३. व्यवस्थित चिन्तन से विचार-शक्ति

अस्त-व्यस्त चिन्तन छोड़ दो। एक विषय लो और उसी के विभिन्न पहलुओं तथा पक्षों पर चिन्तन करो। जब इस प्रकार एक विषय पर चिन्तन करने लगो तब सचेतन मन में कोई विचार आने न दो। यदि मन कहीं अन्यत्र जाये तो उसको तुरन्त अपने ध्येय-विषय पर खींच लाओ।

मान लो, जगद्गुरु शंकराचार्य के जीवन और उपदेशों का आप चिन्तन करने बैठो, तो उनके जन्म-स्थान, उनका बाल्य-जीवन, उनका चारित्र्य, उनका व्यक्तित्व, उनके गुण, उनकी शिक्षा, उनके ग्रन्थ, उनका तत्त्वज्ञान, उनके ग्रन्थों का कोई प्रमुख प्रसंग या श्लोक, उनके द्वारा समय-समय पर प्रदर्शित सिद्धियाँ, उनकी दिग्विजय, उनके चार शिष्य, चार मठ, उनका गीता-भाष्य, उपनिषद् और ब्रह्मसूत्र के भाष्य आदि के विषय में विचार करो। क्रमिक रूप से एक के बाद एक विषय लेते जाओ। उन्हें समाप्त करने तक छोड़ो नहीं। बार-बार मन को एक विषय पर लाओ। तदनन्तर किसी अन्य विषय को लो।

इस प्रकार के अभ्यास से व्यवस्थित चिन्तन करना सध जायेगा। मानसिक चित्र ओजस्वी तथा शक्तिशाली हो उठेंगे। वे अधिक स्पष्ट होंगे, पूरा-पूरा समझ में आने लगेंगे। साधारण मनुष्यों के ये मानसिक चित्र अस्पष्ट और उलझे हुए होते हैं।

४. संकल्प-शक्ति से विचार-शक्ति

जो भी वैषयिक विचार आये, उसे अस्वीकृत कर दो; जो भी प्रलोभन का विचार आये, उसका प्रतीकार करो; प्रत्येक कटु वचन का सँरोध कर दो; उदात्त आकांक्षाओं

का विकास करो—ये सब आपकी संकल्प-शक्ति या आत्म-शक्ति को विकसित करने में सहायक होंगे और आप अपने लक्ष्य के निकट से निकटतर होते जाओगे।

तीव्र भावना के साथ मन में दोहराओ :

'मेरी संकल्प-शक्ति सुदृढ़ है, पवित्र है, अबाध है। ॐ ॐ ॐ
मैं अपनी संकल्प-शक्ति द्वारा सब-कुछ कर सकता हूँ। ॐ ॐ ॐ
मेरे पास अजेय मनोबल है। ॐ ॐ ॐ'

संकल्प ही आत्मा की गति-शक्ति है। जब वह काम करने लगता है तब निर्णय-शक्ति, स्मरण-शक्ति, ग्रहण-शक्ति, सम्भाषण-शक्ति, तर्क-शक्ति, विवेक-शक्ति, विचार-शक्ति और अनुमान-शक्ति—ये सभी मानसिक शक्तियाँ सद्यः कार्यकर हो जाती हैं।

मानसिक शक्तियों का राजा संकल्प है। जब विचार और संकल्प शुद्ध और अबाध बना दिये जाते हैं, तब वे अद्भुत कृत्य कर सकते हैं। अश्लील वासनाओं, विलास और वैषयिक सुख की लालसाओं से संकल्प अशुद्ध और दुर्बल हो जाता है। कामनाएँ जितनी कम होंगी, उतनी ही विचार और संकल्प की शक्तियाँ बलवती होंगी। जब वैषयिक और शारीरिक शक्तियाँ तथा क्रोध आदि वृत्तियाँ संकल्प-शक्ति के रूप में परिणत कर दी जाती हैं, तब वे सहज नियन्त्रित होती हैं। प्रबल संकल्प-शक्ति वाले मनुष्य के लिए इस संसार में कुछ भी अशक्य नहीं है।

जब आप काफी पीने की अपनी पुरानी आदत छोड़ देते हो तो एक सीमा तक रसनेन्द्रिय का नियन्त्रण कर लिया, एक वासना नष्ट कर दी और उसकी लालसा का उन्मूलन कर दिया। चूँकि इससे काफी प्राप्त करने के प्रयत्नों से मुक्ति पा ली और उसकी आदत छूट गयी, इसलिए कुछ शान्ति पाओगे। जो शक्ति काफी की बेचैनी से नष्ट होती थी और आपको उद्विग्न बनाती थी, वह सारी शक्ति अब संकल्प-शक्ति के रूप में रूपान्तरित हो जायेगी। एक काफी की वासना पर विजय पाने से आपकी संकल्प-शक्ति में वृद्धि हुई, इसी प्रकार अन्यान्य पन्दरह कामनाएँ छोड़ दो तो आपकी संकल्प-शक्ति पन्दरह गुना अधिक और काफी बलवती होगी। इस प्रकार संकल्प-शक्ति को बलवान् करने की प्रक्रिया से अन्यान्य कामनाओं के छूटने में भी सहायता मिलती है।

चित्त की अचंचल स्थिति, समत्व, प्रसन्नता, आन्तरिक बल, कठिनाई का सामना करने की क्षमता, प्रत्येक काम में सफलता, लोगों को प्रभावित करने की शक्ति, उदात्त और भव्य व्यक्तित्व, चेहरे पर दिव्य तेज, तेजस्वी आँखें, स्थिर दृष्टि, शक्तिशाली वाणी, सुन्दर चाल, न झुकने की वृत्ति, निर्भयता आदि-आदि प्रबल संकल्प-शक्ति वाले व्यक्ति के कुछ प्रकट चिह्न हैं।

५. स्पष्ट चिन्तन के कुछ सुझाव

सामान्य मनुष्य के संकल्प-विकल्प साधारणतः बहुत ही विक्षिप्त होते हैं। वह जानता ही नहीं कि चिन्तन कितना गहरा होता है। उसके विचार दौड़ते रहते हैं। उसका मन प्रायः ही बहुत उलझा हुआ होता है।

केवल विचारक, दार्शनिक और योगियों में ही सुस्पष्ट और असन्दिग्ध मानसिक चित्र होते हैं। अन्तर्दृष्टि से उन्हें अत्यन्त स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। जो एकाग्रता और ध्यान की साधना करते हैं, उनके मानसिक चित्र सुव्यवस्थित और प्रबल होते हैं।

आपके अधिकतर विचारों का ढाँचा ही ठीक नहीं होता। विचार आते हैं और चले जाते हैं, इसलिए वे भ्रान्त और अनिश्चित होते हैं। चित्र स्पष्ट नहीं होता, बलशाली और असन्दिग्ध नहीं होता।

निरन्तर स्पष्ट और गम्भीर चिन्तन के द्वारा ये गुण प्राप्त किये जा सकते हैं। विचार, विवेक, मनन और ध्यान से अपनी विचार-शक्ति को स्थिर करना होगा और एक सुनिश्चित आकार में ढालना होगा, तब दार्शनिक विचार सुदृढ़ होगा।

सम्यक् चिन्तन, विवेक, आत्म-निरीक्षण और ध्यान से अपने विचारों का विश्लेषण करना होगा, तब सारी सन्दिग्ध अवस्था दूर हो जायेगी, विचार सुदृढ़ होंगे और उनका आधार मजबूत होगा।

चिन्तन स्पष्ट रहे। बार-बार अपने विचारों का विश्लेषण करो। एकान्त में आत्म-निरीक्षण करो। अपने विचारों को प्रचुर मात्रा में शुद्ध करो। विचारों को शान्त कर दो।

मन को उबलने न दो। एक विचार को उठने दो और शान्ति से चुप हो जाने दो; तब दूसरा विचार आने दो। जिस क्षण चिन्तन के अधीन जो विचार है, उससे असम्बद्ध सभी अप्रासंगिक विचारों को भगा दो।

६. गम्भीर और मौलिक चिन्तन की साधना

हममें से अधिकांश लोग जानते ही नहीं कि सही चिन्तन क्या होता है। बहुतों का चिन्तन बड़ा उथला होता है। ऐसे लोग बहुत ही कम होंगे जो गम्भीर चिन्तन करते हों। इस संसार में विचारक बहुत कम हैं।

गम्भीर चिन्तन के लिए कठोर साधना करनी पड़ती है। चित्त के सही विकास में अनेक जन्म लगते हैं और तब चिन्तन गम्भीर तथा व्यवस्थित हो पाता है।

वेदान्ती स्वतन्त्र और मौलिक चिन्तन का अवलम्बन लेते हैं। वेदान्त-साधना (मनन) के लिए तीक्ष्ण बुद्धि आवश्यक है।

कठोर चिन्तन, स्थिर चिन्तन, स्पष्ट चिन्तन, समस्या के मूल में जा कर चिन्तन करना, परिस्थितियों के आधारभूत कारण में जा कर विचार करना, प्रत्येक विचार और वस्तु की पूर्व-कल्पना के मूल का चिन्तन—यह वेदान्त-साधना का सार है।

जब हमारे पुराने विचारों के स्थान पर उनसे उन्नत कोई नया विचार आता है तब हमें उन पुराने विचारों को छोड़ देना होगा—भले ही वे कितने ही प्रबल और रूढ़ हो गये हों।

यदि आपमें अपने चिन्तन के परिणामों का सामना करने तथा अपने विचारों की परिणति को आत्मसात् कर लेने का साहस नहीं है, भले आपके व्यक्तित्व पर उसका कुछ भी प्रभाव पड़े, तो कभी तत्त्वज्ञान की दुहाई देने का कष्ट न करो; भक्ति की शरण लो।

७. व्यावहारिक स्थिर चिन्तन के लिए ध्यान

विचार एक प्रबल शक्ति होने के कारण अपने साथ अद्भुत शक्ति ले जाता है; इसलिए आज यह जानना अत्यन्त आवश्यक हो गया है कि इस विचार-शक्ति का अधिक-से-अधिक उत्तम उपयोग कैसे किया जाये। यह तो ध्यान-साधना से ही सम्भव है।

व्यावहारिक चिन्तन मन को विषयों में केन्द्रित करता है और स्थिर चिन्तन से मन निरन्तर उसमें लगा रहता है। वैराग्य मन के आनन्द और विकास-वृद्धि में सहायक होता है जिसका हेतु कल्याणकारी होता है। ऐसे वैराग्य के साथ उपर्युक्त दोनों प्रकार का चिन्तन जुड़ा होता है।

जब ध्यान जाग्रत होता है तब विचार स्थिर होता और व्यावहारिक बनता है तथा वैराग्य, आनन्द और मन की समग्रता का विकास होता है।

८. रचनात्मक विचार-शक्ति प्राप्त करें

विचार एक प्राणभूत जीवन्त शक्ति है। यह इस विश्व में वर्तमान शक्तियों में सर्वाधिक प्राणभूत, सूक्ष्म तथा अरोध्य शक्ति है।

विचार जीवन्त पदार्थ हैं। वे गतिशील होते हैं। उनका रूप, आकार, रंग, गुण, द्रव्य, बल तथा भार होता है।

विचार ही वास्तविक कर्म है। वह अपने को गतिशील शक्ति के रूप में अभिव्यक्त करता है।

हर्ष का विचार दूसरों में सहचारी भाव से हर्ष का विचार उत्पन्न करता है। उदात्त विचारों का उद्भव दुष्ट विचारों को निष्फल बनाने के लिए एक शक्तिशाली विषनाशक वस्तु है।

अभ्यस्त धनात्मक विचारों के माध्यम से हमें रचनात्मक शक्ति प्राप्त होती है।

९. वैयक्तिकता का विकास करें : सुझावों का प्रतिरोध करें

दूसरों के सुझावों से प्रभावित न हों। अपनी वैयक्तिक भावना रखें। यद्यपि दृढ़ विचार अधीनस्थ व्यक्ति को तुरन्त प्रभावित नहीं करता, पर समय पा कर वह कार्य करता है। वह कभी भी व्यर्थ नहीं जाता।

हम सब सुझावों के जगत् में रहते हैं। हमारा चरित्र दूसरों के साहचर्य से नित्यप्रति अज्ञात रूप से रूपान्तरित होता रहता है।

हम अनजाने ही अपने प्रशंसापात्र व्यक्ति के गुणों का अनुकरण करते हैं। नित्य प्रति अपने सम्पर्क में आने वाले व्यक्तियों के सुझावों को हम नित्य ही आत्मसात् करते हैं। हम इन सुझावों से प्रभावित होते हैं। दुर्बल विचारों वाला व्यक्ति सुदृढ़ विचार वाले व्यक्ति के सुझावों को स्वीकार करता है।

सेवक स्वामी के सुझावों से प्रभावित रहता है। पत्नी अपने पति के सुझावों से प्रभावित रहती है। रोगी डाक्टर के सुझावों से प्रभावित होता है। छात्र अध्यापक के सुझावों से प्रभावित रहता है।

रूढ़ि सुझाव की उपज के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं। आपकी वेश-भूषा, आपका शिष्टाचार, व्यवहार और यहाँ तक कि आपका आहार भी सुझावों के ही परिणाम हैं।

प्रकृति नाना प्रकार के सुझाव देती है। प्रवहणशील सरिताएँ, जाज्वल्यमान रश्मिमाली, सुरभित पुष्प, वर्धमान तरुवर—ये सब आपको निरन्तर सुझाव देते रहते हैं।

१०. विचार-नियमन से अलौकिक शक्तियाँ

एक शक्तिशाली बाजीगर अपनी एकाग्रता और संकल्प-शक्ति से सभा में बैठे सब लोगों को एक-साथ सम्मोहित कर देता है और कई करतब दिखाता है। वह आकाश में एक लाल रस्सी उछाल कर कहता है कि इस रस्सी पर चढ़ कर वह आकाश में चला जायेगा और आँख झपकते ही मंच से अदृश्य हो जाता है; किन्तु फोटो लेने जायें तो कुछ पता नहीं चलेगा।

विचार-शक्ति को ठीक से समझो। सुप्त-शक्ति को प्रकट होने दो। आँखें मूँद लो। धारणा करो। मन की ऊँची भूमिकाओं को पहचानो।

आप दूर की चीजें देख सकते हैं, दूर की वाणी सुन सकते हैं, सन्देश भेज सकते हैं, दूर रहने वाले लोगों का उपचार कर सकते हैं और पलक झपकने-भर में दूर-दूर तक पहुँच सकते हैं।

षष्ठ अध्याय

विचार : उनके प्रकार तथा उन पर विजय

१. धूमिल विचारों से ऊपर उठो

अपने सभी विचारों का सावधानी के साथ ध्यान रखो। मान लो आपके विचार धूमिल हो गये हैं, आप उदासी अनुभव करते हो तो प्याला-भर दूध या चाय लो। शान्ति से बैठो। अपनी आँखें मूँद लो। उदासी का कारण खोजो और उसे दूर करने का प्रयत्न करो।

धूमिल विचारों और उदासी पर विजय पाने का सर्वोत्तम उपाय है कि स्फूर्तिदायी विचारों तथा स्फूर्तिदायी वस्तुओं का विचार किया जाये। पुनः याद रखो, दुर्वृत्ति को दूर करने का उपाय सद्वृत्ति है। यह निसर्ग का बड़ा प्रभावशाली उदात्त नियम है।

अब जोरों से विपरीत विचार करना आरम्भ करो, उदासी के विरोधी गुणों का चिन्तन करो। अपने मन को ऊँचा उठाने वाली बातें सोचो, प्रसन्नता की बातों पर विचार करो। प्रसन्नता के परिणामों पर सोचो। यह अनुभव करो कि आप वस्तुतः उस गुण से युक्त हो।

बार-बार मन में यह सूत्र दोहराओ : 'ॐ प्रसन्नता।' अनुभव करो—'मैं प्रसन्न हूँ।' मुस्कराना प्रारम्भ करो। हँसो, बार-बार हँसो।

गाओ। कभी-कभी इससे आपकी उदासी दूर होगी। गायन उदासी दूर करने का बड़ा लाभदायी उपाय है। जोर-जोर से कई बार ॐ का जप करो। खुली हवा में दौड़ो। उदासी मिट जायेगी। यह राजयोगियों की 'प्रतिपक्ष-भावना' की पद्धति है। यह सरलतम उपाय है।

अधिकार से, संकल्प से, निश्चय से तथा आज्ञा से उदासी को दूर करने में इच्छा-शक्ति पर बहुत जोर पड़ता है, यद्यपि यह बड़ा शक्तिशाली उपाय है। इसके लिए बहुत बड़ी संकल्प-शक्ति की आवश्यकता होती है। साधारण मनुष्य इसमें सफल नहीं होंगे। प्रतिपक्ष-भावना के उपाय, गलत विचारों की जगह सही विचार ला कर उन्हें दूर करने का उपाय बहुत सरल है। अत्यन्त शीघ्र अवांछित विचार दूर हो जाते हैं। इसका

अभ्यास और अनुभव करो। कई बार विफल होने पर भी चलते रहो। कई बार बैठने से, कुछ अभ्यास करने से सफल हो जाओगे।

इसी प्रकार अन्यान्य विरोधी भावनाओं और विचारों को भी हटा सकते हो। क्रोध की भावना आती है तो प्रेम की बात सोचो। यदि ईर्ष्या की भावना है तो उदारता और दयालुता की बात सोचो। यदि उदासी है तो कोई स्फूर्तिदायी दृश्य याद करो जिसे कभी देखा हो या प्रेरणादायी कोई घटना पुनः स्मरण करो।

यदि हृदय में कठोरता जागे तो दया की बात सोचो। काम-वासना यदि आये तो ब्रह्मचर्य का गुण-स्मरण करो। यदि कहीं कोई बेईमानी है तो ईमानदारी तथा पवित्रता की बात सोचो। यदि कृपणता आये तो उदारता और उदार व्यक्तियों के बारे में सोचो।

यदि चित्त पर मोह छा रहा है तो विवेक और आत्म-विचार करो; गर्व यदि हो तो नम्रता की बात सोचो। ढोंग का विचार आता है तो स्पष्टता तथा उसके अल्प लाभों की बात सोचो। यदि ईर्ष्या होती हो तो उदारता और सहृदयता का विचार करो। कायरता या भीरुता यदि आती हो तो हिम्मत और पराक्रम का विचार करो।

इस प्रकार असद्विचार निर्मूल हो जायेंगे और सद्विचार और सद्भावना रूढ़ होगी। सातत्य बहुत आवश्यक है। साथियों का चुनाव भी सतर्कता के साथ करो। बहुत कम बोलो और वह भी जितना आवश्यक हो, उतना ही।

२. फालतू विचारों पर विजय

विचारों पर वश प्राप्त करने में आप प्रारम्भ में बहुत कठिनाई अनुभव करोगे। आपको उनसे संघर्ष करना पड़ेगा। वे भी अपना अस्तित्व बनाये रखने के लिए बहुत प्रयत्न करेंगे। वे कहेंगे—"इस चित्त में बने रहने का हमको भी अधिकार है। बहुत पहले से हमारा यहाँ एकाधिकार रहा है। यह साम्राज्य अब हम क्यों छोड़ें? हम अपने जन्मसिद्ध अधिकार के लिए अन्त तक लड़ेंगे।"

वे आपको बड़े संकट में डाल देंगे। जब आप ध्यान के लिए बैठेंगे तब हर प्रकार के पाप-विचार ही उठ खड़े होंगे। जैसे ही आप उन्हें दबाने का प्रयत्न करेंगे, वे दूने जोर तथा शक्ति से आप पर प्रत्याक्रमण करेंगे; किन्तु सद्वृत्तियाँ हमेशा असद्वृत्तियों पर विजय प्राप्त करती हैं।

जिस प्रकार सूर्य के आगे अन्धकार टिक नहीं सकता, जिस प्रकार सिंह के आगे तेन्दुआ ठहर नहीं सकता, उसी प्रकार ये सब घनी असद्वृत्तियाँ—अगोचर, घुसपैठिये, शान्ति के शत्रु—उदात्त और ईश्वरीय विचारों के आगे खड़ी नहीं रह सकतीं। वे अपनी मौत मरेंगी।

३. घृणित विचारों को हटाओ

अपने मन से समस्त अनावश्यक, अवांछित और घृणित विचारों को हटाओ। अनावश्यक विचार आध्यात्मिक उन्नति में बड़े बाधक हैं। घृणित विचार आध्यात्मिक प्रगति में अवरोध पैदा करने वाले हैं।

जब भी आप अनुपयोगी विचारों का सत्कार करते हैं तब आप परमेश्वर से बहुत दूर होते हैं। उनके बदले ईश्वर का चिन्तन कीजिए। जो सहायक और उपयोगी हों, ऐसे ही विचार मन में लायें। आध्यात्मिक उन्नति और प्रगति में उपयोगी विचार प्राथमिक सीढ़ी के समान हैं।

मन को पुरानी लकीर पर भागने न दीजिए और अपना स्वयं का मार्ग तथा आदतें निर्धारित कीजिए। उन पर कड़ा पहरा रखिए।

जूते में अगर एक भी कंकड़ गड़ने लगे तो हम उसे निकाल देते हैं। जूता खोल कर हिलाते हैं। जब एक बार बात स्पष्ट हो गयी, तब ऐसे अनावश्यक दुष्ट विचारों को मन से निकाल बाहर करना आसान हो जाता है। इसमें संशय या मतभेद नहीं हो सकता। बात स्पष्ट है, अचूक और अनिवार्य है।

मन से दुष्ट विचारों को झाड़ कर निकाल फेंकना उतना ही सरल है, जितना जूते से कंकड़ झाड़ देना और मनुष्य जब तक यह नहीं कर लेता, तब तक आत्मोन्नति की बात करना या प्रकृति पर विजय पाने की बात करना प्रलाप मात्र है। वह तो उस शैतान का बुरी तरह दास तथा शिकार है जो उसी के मस्तिष्क में प्रवेश किये बैठा है।

४. सांसारिक विचारों पर विजय पाओ

विचार-संस्कार का नया जीवन प्रारम्भ करते हैं आप पर सांसारिक विचार आक्रमण करेंगे और बहुत कष्ट देंगे। जब भी आप ध्यान के लिए बैठेंगे और आध्यात्मिक जीवन की ओर मुड़ेंगे, वे तुरन्त आपको उद्विग्न बनायेंगे; किन्तु आप यदि अपने ध्यान और आध्यात्मिक साधना में दृढ़ रहेंगे तो वे सारे विचार शनैः-शनैः अपनी मौत मरने लगेंगे।

ध्यान इन विचारों को भस्म करने की अग्नि है। समस्त सांसारिक विचारों को निकाल देने का प्रयत्न न कीजिए। ध्येय के अनुकूल जितने भी सद्विचार हैं, उनका स्वागत कीजिए। उत्तम विषयों पर विचार कीजिए।

अपने चित्त का सर्वदा बड़ी सावधानीपूर्वक निरीक्षण कीजिए। सजग रहिए। सावधान रहिए। मन में उत्तेजना, ईर्ष्या, क्रोध, द्वेष, घृणा, वासना आदि असद्वृत्तियों की तरंगें उठने न दीजिए। ये सब दुष्ट तरंगें और तथाविध सांसारिक विचार ध्यान, शान्ति और ज्ञान के शत्रु हैं।

ईश्वरीय सद्विचारों के प्रश्रय द्वारा उन्हें तुरन्त दबाइए। मन में उत्पन्न दुष्ट सांसारिक विचारों को जीतने के लिए व्यवस्थित सद्विचार कीजिए या भगवान् के किसी नाम या मन्त्र का जप कीजिए। ईश्वर के किसी रूप का चिन्तन कीजिए। प्राणायाम कीजिए। भगवान् का गुणगान कीजिए। सत्कार्य कीजिए या सांसारिक विचारों से होने वाले दुष्परिणामों पर विचार कीजिए।

जब आप परिशुद्ध हो जायेंगे, तब आपके चित्त में कोई सांसारिक विचार नहीं उठेगा। जिस प्रकार शत्रु या अनधिकार प्रवेश करने वाले व्यक्ति को द्वार पर रोक देना ही सरल होता है, उसी प्रकार सांसारिक विचारों को उनके उठते ही रोक देने में आसानी होती है। अंकुरित होते ही उन्हें नष्ट कर दीजिए। उन्हें मूलबद्ध न होने दीजिए।

५. अपवित्र विचारों पर विजय

अपने दैनिक कार्य में अति-व्यस्त रहने पर आपके मन में अपवित्र विचार नहीं उठते, लेकिन ज्यों-ही आप आराम करने लगते और मन को रिक्त छोड़ देते हैं, त्यों-ही आपके मन में पाप-विचार छद्मवेश में प्रवेश कर जाते हैं। इसलिए मन को विश्राम देते समय बहुत सावधान रहें।

विचारों की पुनरावृत्ति से उनकी शक्ति बढ़ती है। जब कोई अच्छा या बुरा विचार एक बार मन में उठा तो उसका यह स्वभाव ही है कि वह फिर दोबारा आये।

'चोर-चोर मौसेरे भाई' की भाँति विचार एक समूह में रहते हैं। इसी भाँति आप यदि एक असद्विचार को प्रश्रय देते हैं तो सारे असद्विचार एकत्रित हो जायेंगे और आप

पर आक्रमण करेंगे। यदि आप एक सद्विचार को प्रश्रय देते हैं तो सारे सद्विचार एक-साथ मिल जायेंगे और आपकी सहायता करेंगे।

६. ऋणात्मक विचारों का दमन

अपने सब विचारों को व्यवस्थित करना, शुद्ध करना और दमन करना सीखिए। पहले जितने दुष्ट विचार और संशय हैं, उनसे संग्राम कीजिए। दिव्य और ईश्वरीय विचारों को चारों ओर से अपने अन्दर प्रवेश करने दीजिए।

निराशा, पराजय, दुर्बलता, मोह, संशय, भय आदि के विचार ऋणात्मक विचार हैं, असद्विचार हैं। इनके विपरीत शक्ति, विश्वास, पराक्रम, प्रसन्नता आदि धनात्मक विचारों का विकास कीजिए। असद्विचार अपने-आप नष्ट हो जायेंगे।

मन को जप, प्रार्थना, ध्यान, पवित्र ग्रन्थों का स्वाध्याय आदि से भर दीजिए। समस्त असद् और वैषयिक विचारों के प्रति उदासीन रहिए। वे अपने-आप ही दूर हो जायेंगे। उनसे संघर्ष न कीजिए। ईश्वर से बल की याचना कीजिए। सन्तों का चरित्र पढ़िए। भागवत और रामायण का पाठ कीजिए। सभी भक्तों को इस अग्नि-परीक्षा से हो कर गुजरना पड़ा था; इसलिए धैर्य रखिए।

७. अभ्यस्त विचारों को वश में करें

अपने शरीर, वेशभूषा, खान-पान आदि बातों पर विचार करने के हम आदी हो गये हैं। उन्हें आत्म-चिन्तन अथवा अपने हृदय में परमात्म-स्वरूप के विचार द्वारा वश में करना चाहिए। यह दुष्कर कार्य है। इसके लिए धैर्य, समस्त अभ्यास और आन्तरिक आत्मिक शक्ति की आवश्यकता होती है।

श्रुतियाँ उद्घोष करती हैं : "**नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः**" (यह आत्मा दुर्बल को प्राप्त होने वाला नहीं है)। जो निष्ठावान् साधक होते हैं, वे समस्त प्रापंचिक विषयों से निवृत्त हो कर इसके लिए अपना सारा ध्यान केन्द्रित कर देते हैं।

जो सारी वासनाओं का नाश और आदत पड़े हुए विचार-समूह को समाप्त कर देते हैं, वे ब्राह्मी-स्थिति का अनुभव करते हैं तथा श्रद्धा, समता और शान्ति का उपभोग करते हैं। उनमें सबके प्रति समदृष्टि होती है। दुष्ट और प्रबल मन हर प्रकार का दुःख, भय, विषमता, विभिन्नता, उच्च-नीच भाव तथा भेदभाव पैदा करता है और उच्च दैवी गुणों का नाश कर देता है। इस दुःखदायी मन को समाप्त करो।

जब दृश्य और दर्शन दोनों द्रष्टा में विलीन हो जायेंगे, तभी आनन्दानुभव होगा। इसका ही नाम तुरीयावस्था है। तब असीम ज्ञान और एकमात्र आत्मा ही सर्वत्र दिखायी देता है। सभी प्रकार के भेद तथा द्वैतभाव पूर्णतया समाप्त हो जाते हैं।

आकर्षण और विकर्षण, राग और द्वेष, प्रिय और अप्रिय—इन सब द्वन्द्वों का सम्पूर्ण नाश होना चाहिए। तब योगी को शरीर का भान नहीं रहेगा, भले ही वह उसमें काम करता रहेगा। जिस प्रकार कोई कुलटा स्त्री दूरस्थ विट् के ध्यान में सदा तल्लीन रहते हुए भी घर के सभी काम-काज ठीक से करती रहती है, उसी प्रकार वह योगी भी समस्त सांसारिक कृत्यों में लगे रहने पर भी, हर प्रकार की भ्रान्तियों और प्रलोभनों के बीच रहते हुए भी अपना संयम नहीं खोयेगा। वह सर्वदा अपना ध्यान ब्रह्म में केन्द्रित करेगा।

आप सब केवल वही सत्कार्य किया करें जो आपको ज्ञान-प्राप्ति में सहायक हो, जिससे भविष्य में सांसारिक सुख-समृद्धि का विचार न हो। समस्त, द्वैतभाव, भेदभाव और निज-पर-भाव का उन्मूलन करके ब्रह्मानन्द में, पूर्ण प्रकाश की अवस्था में आप निमग्न रहें।

८. अनावश्यक विचारों का पराभव

अनावश्यक और असंगत विचारों को भगाने के लिए संघर्ष मत छेड़िए। उन्हें भगाने के लिए आप जितना भी प्रयत्न करेंगे, वे उतने ही जोर से लौट आयेंगे, दूनी शक्ति प्राप्त करेंगे। आप अपनी शक्ति और संकल्प को क्यों कष्ट देते हो?

उनकी उपेक्षा कीजिए। मन में सदा सद्विचार भरिए। वे धीरे-धीरे अस्त हो जायेंगे। तैलधारावत् ध्यान के द्वारा निर्विकल्प समाधि प्राप्त कीजिए।

शरीरगत तनावों को दूर करने से मन स्वस्थ और शान्त हो जायेगा। शिथिलीकरण की प्रक्रिया से मन, थके हुए अंगों और शिथिल नाड़ियों को विश्राम दीजिए। आप उससे अपरिमित मानसिक शान्ति, शक्ति और ताजगी अनुभव करेंगे। जब आप मन और शरीर का शिथिलीकरण करें, तब मस्तिष्क में किसी भी प्रकार का अव्यवस्थित या असंगत विचार न आने दें; क्रोध, हताशा, असफलता, अस्वस्थता, दुःख, शोक, झगड़ा आदि से मन का आन्तरिक तनाव बढ़ता है। उन्हें निष्कासित कर दीजिए।

९. नैसर्गिक विचारों का रूपान्तरण

चिन्तन चार प्रकार का है : प्रतीक चिन्तन, नैसर्गिक चिन्तन, उत्तेजक चिन्तन और अभ्यासगत चिन्तन।

शब्दों के द्वारा चिन्तन प्रतीक चिन्तन या सांकेतिक चिन्तन है। नैसर्गिक चिन्तन उत्तेजक चिन्तन से अधिक बलशाली होता है। शरीर, खान-पान, स्नान आदि बातों का चिन्तन अभ्यासगत चिन्तन है।

सांकेतिक चिन्तन को आसानी से रोका जा सकता है, पर नैसर्गिक और उत्तेजक चिन्तन को रोकना कठिन है।

चिन्ता और क्रोध को दूर करने से मानसिक समता और शान्ति प्राप्त की जा सकती है। भय वस्तुतः चिन्ता और क्रोध इन दोनों में सन्निहित रहता है। सजग और सतर्क रहें। प्रत्येक अनावश्यक चिन्ता को हटा दीजिए। उत्साह, पराक्रम, सन्तोष, शान्ति और प्रसन्नता की बात सोचिए। प्रतिदिन किसी अभ्यस्त सुखासन में कुछ समय के लिए शान्ति से बैठिए।

आप आराम-कुरसी पर बैठ जाइए। आँखें मूँद लीजिए। बाह्य विषयों से मन को समेट लीजिए। मन को स्थिर कीजिए। उफनते हुए विचारों को शान्त कीजिए।

१०. अभ्यागत विचारों की संख्या घटायें

सामान्यतया अभ्यासहीन व्यक्तियों के मन में चार-पाँच प्रकार के विचार एक-साथ हावी हो जाते हैं। घरेलू बातें, काम-धन्धे की बातें, कार्यालय की बातें, शरीर की बातें, खाने-पीने की बातें, आशा, आकांक्षा, धन कमाने की कोई योजना, किसी से प्रतीकार लेने की बात, शरीर की आदतों से सम्बन्धित कुछ अभ्यासगत विचार तथा स्नान इत्यादि की बातें एक-साथ उनके मन में उठा करती हैं।

सायं ३-३० बजे बड़ी रुचि से कोई पुस्तक पढ़ने बैठें कि ४-०० बजे खेले जाने वाले क्रिकेट को देखने के आनन्द की भावना उसके मन में बार-बार बाधा उपस्थित करती है। एकमात्र एकाग्रचित्त योगी ही एक समय में एक ही विचार कर सकता है; मन की यह अवस्था दीर्घकाल तक बनाये रख सकता है।

आप अपने मन का सूक्ष्मता से निरीक्षण करें तो विदित होगा कि कई विचार तो असंगत ही हैं। मन व्यर्थ ही इधर-उधर भटकता रहता है। एक विचार अपनी देह और

उसकी आवश्यकताओं को उठाता है तो दूसरा मित्रों के बारे में होता है; कुछ विचार धन कमाने के आते हैं तो कुछ खाने-पीने के आते हैं, कुछ तो बचपन के स्मरण-सम्बन्धी विचार होते हैं।

यदि आप अपने मन का अध्ययन करें, एक समय में एक ही विचार करें और दूसरे विचारों को अलग कर दें तो यह अपने-आपमें एक बड़ी उपलब्धि मानी जायेगी; क्योंकि विचार-नियमन की दिशा में प्रगति की यह एक महत्त्वपूर्ण स्थिति है। निरुत्साहित मत हों।

११. स्फूर्तिदायी विचार एकत्र करें

जीवन का ध्येय भगवद्भाव प्राप्त करना है। वह इस प्रकार की अनुभूति करता है कि 'मैं न तो यह नश्वर शरीर हूँ, न परिवर्तनशील सीमित मन हूँ। मैं तो परिशुद्ध नित्य मुक्त आत्मा हूँ।'

इस स्फूर्तिदायी विचार का सदा स्मरण रखें : **''अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणः''**—यह जन्मरहित है, नित्य है, स्थायी है और सनातन है। यही आपका वास्तविक स्वरूप है। यह नाम-रूपात्मक अस्थायी शरीर आप नहीं हैं। न तो आप रामस्वामी हैं, न तो मेहता हैं, न मुखर्जी हैं; मैथ्यू, गर्दे, आप्टे कुछ भी नहीं हैं। अज्ञान के कुछ उड़ते बादलों के कारण आप इस छोटे से अस्तित्व के भ्रम में पड़ गये हैं। जागें और अनुभव करें कि आप शुद्ध आत्मा हैं।

एक और महान् स्फूर्तिदायी औपनिषदिक वचन है : **''ईशावास्यमिदं सर्वम्''**—यह जो-कुछ भी जीवनवान् इस जग में है, सब परमेश्वर से आवासित है। फूलों और हरी दूबों के साथ मुस्करायें। पौधों, अंकुरों और डालियों के साथ खिलखिलायें। अपने सभी पड़ोसियों से; कुत्ते, बिल्ली, गाय, मानव, पशु, पक्षी और वृक्ष से—तात्पर्य यह है कि समस्त सृष्टि से मैत्री जोड़ें। आपका जीवन पूर्ण होगा, समृद्ध होगा।

१२. आलोकमय विचारों का मनन करो

यदि आप अपनी विचार-शक्ति को बढ़ाना चाहते हैं, अपना व्यक्तित्व विकसित करना चाहते हैं और महान् बनना चाहते हैं तो हमेशा अपने पास कोई ऐसी दो-एक पुस्तकें रखें जिनमें तेजस्वी और आलोक प्रदान करने वाली बातें हों। बार-बार उन्हें

पढ़ते रहें और तब तक पढ़ते रहें जब तक वे आपके जीवन में एकरस न हो जायें और जीवन में तथा नित्य-क्रियाओं में प्रतिफलित होने न लगें।

मननार्थ यहाँ कुछ स्फूर्तिदायी विचार दे रहा हूँ :

१. विशुद्ध चेतना से हृदय सुदृढ़ और चित्त शक्तिशाली होता है।

२. दारिद्र्य आलस्य का बड़ा भाई है।

३. आत्मज्ञान सर्वोत्तम निधि है। ध्यान उसकी कुंजी है।

१३. गलत विचार बनाम सही विचार

वासना और कामनामय विचारों को ब्रह्मचर्य के गम्भीरतापूर्ण अभ्यास से, सत्य के साक्षात्कार की गहरी निष्ठा से, ईश्वर-दर्शन की उत्कण्ठा से तथा पवित्रता के लाभों के चिन्तन से जीतना चाहिए।

घृणा और क्रोध के विचारों को प्रेम, क्षमा, दया, मैत्री, शान्ति, सहिष्णुता और अहिंसा के विकास से जीतना चाहिए।

गर्व और उससे जुड़े हुए विचारों को नम्रता विकसित करने वाले मूल्यों के व्यवस्थित मानसिक परीक्षण द्वारा नियन्त्रित करना चाहिए।

लोभ, परिग्रह और लालसा के विचारों को प्रामाणिक व्यवहार, अनासक्ति, उदारता, सन्तोष, अलिप्सा आदि विचारों से समाप्त करना चाहिए।

संकीर्णता, ईर्ष्या और हीनता पर विजय पाने में उदात्तता, महत्ता, सन्तोष और हृदयवैशाल्य उपयोगी होते हैं।

भ्रान्ति और मोह को जीतने के लिए विवेक-बुद्धि का विकास उत्तम उपाय है।

मिथ्याभिमान दूर करने के लिए सर्वतोमुखी सादगी और अहंकार को मिटाने के लिए सज्जनता का विकास करना चाहिए।

१४. विचार का सरगम

विचार अनेकविध हैं—नैसर्गिक विचार, दृश्य विचार (दर्शन-सम्बन्धी शब्दों से किया जाने वाला विचार), श्राव्य विचार (श्रवण-सम्बन्धी शब्दों से किया जाने वाला

विचार), सांकेतिक विचार (संकेतों की भाषा से किया जाने वाला विचार) और आदत के अनुसार किया जाने वाला विचार।

कुछ संचारी विचार होते हैं जो हलचल, खेल-कूद और भाग-दौड़ की भाषा में किये जाते हैं। कुछ भावनात्मक विचार हैं।

विचार दृश्य से श्राव्य बन सकते हैं और श्राव्य से संचारी में बदल सकते हैं।

सोचने का और साँस का बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है, क्योंकि मन और प्राण का निकट सम्बन्ध है। जब मन को एकाग्र करते हैं, तब साँस धीमी हो जाती है। अगर विचार जोरों से चलने लगे तो साँस भी तेज चलेगी। साइकोग्राफ (Psychograph) एक यन्त्र है जो विचारों का अध्ययन प्रस्तुत कर देता है कि मन में किस प्रकार का विचार चल रहा है।

१५. हीन विचार और नैतिक विकास

अनियन्त्रित विचार ही सभी प्रापों का मूल है। प्रत्येक विचार अपने-आपमें नितान्त दुर्बल होता है; क्योंकि असंख्य और नानाविध विचार मन को बराबर विभाजित करते रहते हैं।

विचारों को जितना-जितना नियन्त्रित करते जायें मन की एकाग्रता उतनी-उतनी बढ़ती जाती है और परिणामस्वरूप मनोबल और विचार-शक्ति अधिक होती जाती है।

हीन और दुष्ट विचारों को मिटाने में पर्याप्त धैर्य की आवश्यकता पड़ती है; परन्तु उच्च विचारों का चिन्तन उन्हें बड़ी आसानी से और शीघ्रता से नष्ट करने का उत्तम उपाय है। जो मूढ़ जन विचार के सिद्धान्तों को नहीं जानते हैं तथा प्रापंचिक विषयों में निमग्न रहते हैं, वे बहुत शीघ्र घृणा, ईर्ष्या, क्रोध, प्रतीकार, वासना आदि दुष्ट विचारों के शिकार बन जाते हैं, स्वयं दुर्बल संकल्प वाले बनते हैं, विवेकहीन होते हैं और मन की सूक्ष्म विपरीत वृत्तियों के दास बन जाते हैं।

मनोबल प्राप्त करने का सर्वोत्कृष्ट उपाय यही है कि उन्नत, उदात्त और सद्विचारों का चिन्तन किया जाये और उनकी सहायता से क्षरणशील, विक्षेपकारी, चंचल वैषयिक तथा प्रापंचिक विचारों को नियन्त्रित किया जाये।

जब भी कोई असद्विचार मन में आये तो उसे जीतने का सर्वोत्तम उपाय यही है कि उसकी उपेक्षा की जाये। पाप-विचार की उपेक्षा कैसे करें? उसे भूल जायें। भूलें कैसे? उसमें रमण न करें और उसका लगातार चिन्तन न करें।

उनमें हम रमें कैसे नहीं और निरन्तर चिन्तन कैसे न करें? अत्यन्त रुचिकर, उन्नत, स्फूर्तिदायी किसी दूसरे विचार की ओर ध्यान दें। उन्हें भूल जायें, ठुकरा दें, प्रेरणाप्रद कोई दूसरी बात सोचें। इन तीनों बातों का अभ्यास करना पाप-विचारों पर वश प्राप्त करने की उत्तम साधना है।

सप्तम अध्याय

विचार-नियमन के विधायक उपाय

१. एकाग्रता के अभ्यास से विचार-नियमन

उफनते हुए विचारों को निस्तब्ध करो। भावनाओं के आवेगों को शान्त करो। प्रारम्भ में किसी मूर्त रूप पर एकाग्रता का अभ्यास करो। पुष्प, भगवान् बुद्ध की मूर्ति, कोई काल्पनिक चित्र, हृदय का कोई उज्ज्वल प्रकाश, किसी सन्त या अपने इष्टदेव का चित्र—इनमें से किसी एक पर चित्त एकाग्र करो।

दिन-भर में तीन या चार बार—उषाकाल में, प्रातः आठ बजे, तीसरे पहर चार बजे और सायंकाल को आठ बजे—अभ्यास के लिए बैठो। भक्त जन हृदय पर, राजयोगी त्रिकुटी पर (चित्त के अधिष्ठान पर) तथा वेदान्ती ब्रह्म पर एकाग्रता साधते हैं। यह त्रिकुटी दोनों भौंहों के मध्य में है।

आप नासाग्र, नाभि या मूलाधार (रीढ़ के निचले भाग) पर भी एकाग्रता का अभ्यास कर सकते हैं।

मन में जब असंगत विचार उठते हैं, तब उदासीन रहो। वे स्वयं जाते रहेंगे। बलपूर्वक भगाने का प्रयत्न न करो, अन्यथा वे भी जोर करेंगे तथा बने रहने को आपका प्रतिरोध करेंगे। वे आपके संकल्प-बल को क्लान्त बनायेंगे और द्विगुणित वेग से प्रवेश करेंगे। इनके स्थान में सद्विचार को प्रश्रय दो। असंगत विचार शनैः-शनैः क्षीण पड़ जायेंगे। एकाग्रता के अभ्यास में धीरे-धीरे, किन्तु दृढ़तापूर्वक बढ़ो।

यह एकाग्रता मनोवृत्तियों के निरोध के लिए है। एकाग्रता का अर्थ है—मन को एक ही रूप में दीर्घ काल तक टिकाये रखना। मन की चंचलता को रोकने और उसकी स्थिरता में आड़े आने वाली समस्त बाधाओं को दूर करने के लिए किसी एक वस्तु पर एकाग्रता का अभ्यास करना चाहिए।

एकाग्रता वैषयिक विचारों और कामनाओं की विरोधी है; चिन्ता और घबराहट का विरोधी आनन्द रूप है, व्यग्रता का विरोधी स्थिर चिन्तन रूप है, आलस्य तथा शिथिलता का विरोधी व्यावहारिक चिन्तन रूप है तथा कुविचारों का विरोधी भावातिरेक है।

बाह्य विषयों पर एकाग्रता साधना सरल है। बाहर की ओर दौड़ना मन का स्वभाव है। अपने सम्मुख श्री कृष्ण, राम, नारायण, देवी या प्रभु ईसा का कोई चित्र रख लो। पलक न झपकते हुए उसकी ओर निरन्तर एकटक देखो। बदन देखो, देखते-देखते चरण पर आओ। यही क्रम पुनः-पुनः दोहराओ। जब मन का भटकना बन्द हो जाये, तब किसी एक विशेष स्थान पर रुको। फिर आँखें बन्द करो और मन से चित्र का स्मरण करो।

चित्र न रहने पर भी स्पष्ट चित्र देखने की क्षमता पैदा होनी चाहिए। क्षण मात्र में वह चित्र आँखों के सामने आ जाये, ऐसा अभ्यास होना चाहिए। फिर मन को वहीं कुछ समय स्थिर रखो। यही एकाग्रता है। इसका अभ्यास प्रतिदिन करना चाहिए।

अपनी एकाग्रता की शक्ति को बढ़ाना चाहो तो सांसारिक कामनाओं और प्रवृत्तियों को घटाना होगा तथा प्रतिदिन कुछ घण्टे मौन रखना होगा। तभी मन बड़ी सुगमता से अनायास एकाग्र हो सकेगा।

एकाग्रता के समय में मानस में केवल एक ही तरंग उठने देनी होती है। मन केवल एक ही वस्तु में तन्मय होता है। मन के शेष सभी कार्य स्थगित हो जाते हैं।

२. सद्वृत्तियों से विचार-नियमन

अपने चित्त में विशेष सद्वृत्तियों का विकास करते हुए जितने भी घातक, अवांछित विचार और प्रभाव हैं, उनसे अपने को बचाने का बल एकत्र करने का प्रयत्न कीजिए। यह सम्भव है कि आप उस प्रयत्न में अन्दर से आत्मा की समस्त उन्नत प्रेरणाओं को और बाहर से श्रेष्ठ शक्तियों और प्रभावों को ग्रहण करने योग्य बन जायें। अपने को यह सुझाव दें : 'मैं अपने को आवृत रखता हूँ। मैं सभी असद्वृत्तियों और हीन विचारों से अपने को बचा लेता हूँ और सभी सद्वृत्तियों और उच्च विचारों के लिए अपने को खुला और ग्रहणशील रखता हूँ।' पूर्ण अवधानपूर्वक इस प्रकार की भावभंगिमा यदा-कदा अपनाने से इसकी आदत हो जाती है।

जिस अनुपात में सद्वृत्तियों को प्रवेश करने देते हैं, उस सीमा तक जीवन के दृश्य-अदृश्य दोनों पक्षों से अवांछित हीन वृत्तियों का आक्रमण कुण्ठित हो जाता है। वस्तुतः हम उन्हें जितना आने दें, वे उतना ही आते हैं।

मन में शंका रहती है, सच्चाई भी रहती है। शंका यह उठती है कि ईश्वर है या नहीं। इसका नाम 'संशय-भावना' है। दूसरी शंका यह उठती है कि मैं उस ब्रह्म का

साक्षात्कार कर सकूँगा या नहीं। फिर दूसरी वाणी कहती है कि ब्रह्म सत्य है। वह हस्तामलकवत् ठोस और स्पष्ट सत्य है। वह प्रज्ञानघन है, चिद्घन है तथा आनन्दघन है। मैं उसके दर्शन कर सकता हूँ।

हमें कुछ बातें स्पष्ट रूप से ज्ञात हैं और वे विचार हममें दृढ़ता से रूढ़ और बद्धमूल हो गये हैं। कुछ विचार अस्पष्ट हैं, स्थिर नहीं हो पाते हैं। वे आते-जाते रहते हैं। जब तक वे हममें दृढ़ता से टिक न जायें, हममें आत्मसात् न हो जायें, तब तक उनके लिए हमें सबल भूमिका निर्माण करनी होगी।

विचारों के स्पष्टीकरण से चित्त की आकुलता और उलझनें दूर हो जाती हैं। जब यह शंका पैदा हो कि ईश्वर है अथवा नहीं, अथवा मैं आत्म-साक्षात्कार कर सकूँगा या नहीं तब सुनिश्चित और विवेकपूर्ण विचारों से उस शंका का निरसन करना चाहिए कि 'ईश्वर सत्य है, मैं सफल हो सकता हूँ, इसमें लेशमात्र भी शंका नहीं है।' 'मेरे शब्दकोश में अशक्य, असम्भव, कठिन आदि शब्दों का स्थान ही नहीं है। इस संसार में सब-कुछ सम्भव है।'

जब आप निश्चय कर लें तो कुछ भी कठिन नहीं है। दृढ़ निश्चय और पक्के निर्णय से जीवन के हर कार्य अथवा प्रत्येक अध्यवसाय में विशेषतया मनोजय के विचारों में सफलता सुनिश्चित है।

३. असहकार से विचार-नियमन

जब मन व्यर्थ भटकने लगे, तब उसके साथ असहकार करो। फिर धीरे-धीरे मन वश में आ जायेगा। मन से असहकार करने का व्यावहारिक उपाय देता हूँ : मन जब कहता है कि 'आज मैं मिठाई खाऊँगा', तो आप कहो, 'मैं तुम्हारा साथ नहीं दूँगा। मैं मिठाई नहीं खाऊँगा। मैं केवल रोटी-दाल खाऊँगा।' यदि मन कहे कि 'मुझे सिनेमा देखना ही है' तो आप कहना कि 'मैं तो रामानन्द जी के सत्संग में जाऊँगा, उपनिषदों का प्रवचन सुनूँगा।' जब मन कहे कि 'मैं रेशमी कुरता पहनूँगा' तब आप कहना, 'आगे कभी रेशमी वस्त्र नहीं लूँगा। खादी ही पहनूँगा।' यह है असहकार का स्वरूप।

मन के साथ असहकार करना मानो प्रवाह के विपरीत तैरना है; क्योंकि इसमें इन्द्रियों के आकर्षण के विरुद्ध चलना होता है। इससे मन क्रमशः क्षीण होता जाता है और एक समय वह आपका आज्ञाकारी अनुचर बन जायेगा। आप मन के स्वामी बनोगे।

निग्रही पुरुष संयम के साथ विषय-वस्तुओं के बीच विचरण करते हुए भी अनेक आकर्षण और विकर्षण से अलग रह कर शान्ति प्राप्त करता है। इन्द्रियाँ और मन दोनों में ये दो गुण—आकर्षक और विकर्षण—अवश्य होते हैं। इसलिए इन्द्रियों और मन को कुछ पदार्थ प्रिय लगते हैं और कुछ अप्रिय; परन्तु निग्रही व्यक्ति समस्त सांसारिक विषयों के बीच रहते हुए भी आकर्षण और विकर्षण से प्रभावित नहीं होता। उसका स्वामी आत्मा होता है और इस कारण परम शान्ति प्राप्त करता है।

जिस व्यक्ति ने चित्तवृत्तियों का नियमन किया होता है, उसकी संकल्प-शक्ति बड़ी बलवती होती है; अतः मन और इन्द्रियाँ उसकी संकल्प-शक्ति की अनुगामिनी होती हैं। निग्रही व्यक्ति वही आहार ग्रहण करता है जो उसके शरीर-धारण के लिए आवश्यक होता है और उसमें किसी प्रकार का प्रिय-अप्रिय का भाव नहीं रहता। वह शास्त्र-निषिद्ध वस्तुओं को कभी ग्रहण नहीं करेगा।

४. विचारों के विरलीकरण की कला

रबड़ के उद्यान में काम करने वाले माली रबड़ के वृक्षों के विरलीकरण के लिए बड़े वृक्षों के आस-पास उगने वाले छोटे-छोटे फालतू वृक्षों को काट कर फेंक देते हैं। इससे उनको बड़े वृक्षों से अधिक मात्रा में दूध (रबड़ का रस) प्राप्त होता है। इसी प्रकार आप भी अमरता का अमृत पान करना चाहें तो छोटे-मोटे फालतू विचारों को एक-एक कर नष्ट करते हुए विचार-वन को विरल बनाइए।

जिस प्रकार अच्छे-अच्छे फल टोकरी में चुन कर रख लेते हैं और सड़े-गले फलों को फेंक देते हैं, उसी प्रकार अपने मन में अच्छे विचारों को रख लें और बुरे विचारों को उत्सर्जित कर दें।

जिस प्रकार योद्धा कूट-द्वार से प्रवेश करने वाले शत्रु-सैनिकों का एक-एक करके शिर काट देता है, उसी प्रकार चित्त के कूट-द्वार से मनःपटल पर प्रविष्ट होने वाले असद्विचारों को एक-एक करके नष्ट करते जाइए।

जब छिपकली की पूँछ कट जाती है तो कुछ समय तक वह पूँछ का टुकड़ा नाचता रहता है; क्योंकि उसमें अल्प-मात्रा में प्राण विद्यमान है। एक-दो क्षण में सभी गति रुक जाती है। इसी प्रकार विचारों को काट फेंकने के अनन्तर भी कुछ विचार, कटी पूँछ की तरह, थोड़ी-बहुत हलचल करेंगे, परन्तु वे दुर्बल हो चुके होते हैं। उनसे विशेष हानि होने वाली नहीं है; क्योंकि उनमें कोई बल नहीं है।

डूबता हुआ मनुष्य अपने प्राणों के रक्षार्थ तिनकों तक का आश्रय खोजता है, उसी प्रकार ये निष्प्राण विचार पुनः अपनी पूर्व-प्राणमयता तथा ओजपूर्ण स्थिति में मन में अधिष्ठित होने के लिए यथाशक्य प्रयास करेंगे। यदि आप अपनी एकाग्रता और ध्यान-साधना का अभ्यास नियमित रूप से करते रहेंगे तो वे तैल-रहित दीपक की तरह स्वयं समाप्त हो जायेंगे।

काम, क्रोध, ईर्ष्या, अहंभाव, घृणा आदि विकार बहुत गहरे जमे होते हैं। डालियाँ काटने से वृक्ष निर्मूल नहीं होता, वरन् और घने रूप से कोंपलें फूट निकलती हैं। इसी प्रकार ये विचार एक बार कटने पर भी, क्षीण कर दिये जाने पर भी कुछ समय पश्चात् फिर प्रकट होने लगते हैं। अतः विवेक, विचार, ध्यान आदि प्रबल साधनों से उन्हें निर्मूल ही कर देना चाहिए।

५. विचार-नियमन की नेपोलियन की पद्धति

जिस समय एक विचार कर रहे हों तो दूसरे विचारों को प्रवेश न करने दीजिए। गुलाब का विचार कर रहे हों तो केवल विविध गुलाबों का ही विचार करें; दूसरे विचारों को आने न दें।

दया का विचार कर हों तो केवल दया का ही विचार करें; क्षमा, सहिष्णुता आदि का विचार न करें। गीता का अध्ययन करने बैठें तो चाय या क्रिकेट की बात न सोचें। प्रस्तुत एक ही विषय पर पूर्णतया लीन रहें।

नेपोलियन ने अपने विचारों को इस तरह वश में किया था : "जब मैं अधिक सुख का अनुभव करना चाहता हूँ, तब दुःखकर और असुखकर विचारों के आलयों को बन्द करके मात्र सुख के ही आलय खोल लेता हूँ। सोना चाहूँ, तो मन के सभी आलय बन्द कर देता हूँ।"

६. दुष्ट विचारों के पुनरावर्तन को रोकें

मान लीजिए, आपके मस्तिष्क में कोई एक दुष्ट विचार है, वह बारह घण्टे रहता है और प्रति तीसरे दिन आया करता है। ध्यान और एकाग्रता का अभ्यास करते हुए आप यदि उसे बारह के स्थान में दश घण्टे ही रहने दें, प्रति तृतीय दिन के स्थान में सप्ताह में एक बार आने दें तो निश्चित ही आपने बड़ी सफलता प्राप्त की। इसी प्रकार अभ्यास

चालू रखने से उसके रहने की अवधि और लौट आने का दिन दोनों शनैः-शनैः घटाये जा सकते हैं।

अन्ततः वे सर्वथा नष्ट हो जायेंगे। एक या दो वर्ष पूर्व के मन की स्थिति के साथ आज के मन की स्थिति की तुलना कीजिए, तब आपको प्रगति का पता चल जायेगा।

प्रारम्भ में प्रगति बहुत धीमी रहेगी। उस समय प्रगति को नापना कठिन होगा।

७. दुष्ट विचारों से नरमी न बरतें

प्रारम्भ में एक दुष्ट विचार मन में प्रवेश करता है। तब आप उस पर प्रबल कल्पना कीजिए। उसमें थोड़ी देर रमिए।

उसे कुछ समय मन में बने रहने की अनुमति दीजिए। जब आप उसका प्रतिरोध नहीं करते, तब वह धीर-धीरे आपके मन में गहरी जड़ जमाने लगेगा।

तब उसको दूर करना बड़ा कठिन होगा। कहावत है : 'ऊँगली पकड़ कर पहुँचा पकड़ने लगे'; यह बात दुष्ट विचारों पर अक्षरशः सही है।

८. दुष्ट विचारों को अंकुरित होते ही नष्ट कर दो

घर में कोई कुत्ता या गधा प्रविष्ट होना चाहे तो जिस प्रकार आप द्वार बन्द कर देते हैं, उसी प्रकार किसी दुष्ट विचार को चित्त में प्रवेश करने और अन्दर जा कर मस्तिष्क-तन्तुओं पर प्रभाव डालने देने से पूर्व ही मन के द्वार बन्द कर दीजिए। इससे आप बुद्धिमान् बनेंगे और शीघ्र ही परम शान्ति तथा परमानन्द का उपभोग करेंगे।

वासना, लोभ और अहन्ता को पूर्णतः नष्ट कर डालिए। केवल पवित्र विचार को ही प्रश्रय दीजिए। यह कार्य पर्वतारोहण जैसा ही कठिन है; परन्तु इसका अभ्यास करना होगा। कुछ समय में आपको अपने प्रयास में सफलता मिल सकती है।

एक दुर्वृत्ति का नाश कर दें तो उससे आपका विश्वास बढ़ेगा, दूसरी वृत्तियों को भी नष्ट करने का बल प्राप्त होगा और आपके मनोबल या आत्म-शक्ति में वृद्धि होगी।

दुर्गुण का नाश करने में विफलता हाथ लगे तो हताश न हों। श्रम बिना सुख कहाँ? धीरे-धीरे आपकी आन्तरिक शक्ति प्रकट होने लगेगी, आप इसका अनुभव करेंगे।

९. कुविचारों के नाश के लिए आध्यात्मिक उपाय

जब कुविचार आपके मन में प्रवेश करेंगे, तब आपके मन में कभी-कभी थरथराहट होगी। यह इस बात का लक्षण है कि आपकी आध्यात्मिक प्रगति हो रही है, आप आध्यात्मिक विकास कर रहे हैं। विगत दिनों के दुष्कर्मों से आपके मन में पश्चात्ताप होगा। यह भी आपके आध्यात्मिक ऊर्ध्वारोहण का ही लक्षण है।

अब आप वैसे कार्य की पुनरावृत्ति नहीं करेंगे। सोचने पर ही आपका मन काँप उठेगा। पूर्वाभ्यासवश कोई गलत काम करने की प्रेरणा हुई तो आपके शरीर में सिहरन होगी। पूरी शक्ति लगा कर, लगन के साथ अपना ध्यानाभ्यास चालू रखिए। सभी दुष्कर्मों का स्मरण, दुर्विचार और शैतान की सारी दुष्प्रेरणाएँ अपने-आप मिट जायेंगी। आप शुद्ध और पवित्र हो जायेंगे।

प्रारम्भ में ज्यों-ही आप ध्यान लगाने लगेंगे, अविलम्ब ही सारे दुष्ट विचार आप पर आक्रमण करेंगे। जब आप सद्विचारों का चिन्तन करने बैठते हैं, तभी ऐसा क्यों होता है?

इसी के कारण कई साधक अपनी साधना बीच में ही छोड़ बैठते हैं। आप बन्दर भगाने का प्रयत्न करते हैं तो वह प्रतिकार के लिए बड़े वेग के साथ आप पर झपटता है। इसी प्रकार जब भी आप सद्विचारों को जाग्रत करने का प्रयत्न करते हैं, तब ये पुराने दुष्ट विचार भी प्रतीकार लेने की भावना से आप पर दूने वेग से आक्रमण करते हैं। जब भी आप शत्रु को घर से निष्कासित करने का प्रयत्न करते हैं, तब वे बड़ी उग्रता से आपका प्रतिरोध करते हैं।

प्रतिकार निसर्ग का ही एक गुण है। पुराने दुष्ट विचार अपना अधिकार जताते हैं और कहते हैं, 'भय्या! इतने क्रूर क्यों बनते हो! आपने अविस्मरणीय काल से हमें अपने मन-रूपी कार्यालय में रहने दिया है। हमें यहाँ बने रहने का पूर्ण अधिकार है। आपके प्रत्येक दुष्कृत्य में आज तक हमने सहायता की है। आज ही हमें अपने निवास-स्थान से क्यों धकेलना चाहते हैं? हम अपना स्थान नहीं छोड़ेंगे।' किन्तु आप इससे निराश न होइए। अपने ध्यानाभ्यास में निरन्तर लगे रहिए। समय पर ये दुष्ट विचार स्वयं क्षीण हो जायेंगे। अन्ततः वे सब नष्ट हो जायेंगे।

यह प्रकृति का नियम है कि सद्वृत्ति सर्वदा दुर्वृत्ति पर विजय पाती है। असद्विचार कभी भी सद्विचार के आगे टिक नहीं सकते। साहस भय पर विजयी होता है। सहिष्णुता

क्रोध और चिड़चिड़ेपन पर विजयी होती है। प्रेम द्वेष पर विजय पाता है। पवित्रता वासना को पराजित करती है।

ध्यान के लिए बैठते ही जब बुरे विचार आते हैं, तब आप व्याकुल होते हैं। यही इस बात का प्रमाण है कि आप अध्यात्म-मार्ग में प्रगति कर रहे हैं। इससे पूर्व तो आप प्रत्येक प्रकार के दुष्ट विचार को जानते-बूझते हुए भी अपने चित्त में सुखपूर्वक बसने देते थे, उनका स्वागत करते थे, उनको पोसते थे।

अपनी आध्यात्मिक साधना में दृढ़ रहिए। श्रम और अध्यवसाय कीजिए। आप अवश्य ही सफल होंगे। दो-तीन वर्ष तक सतत जप और ध्यान का साधारण अभ्यास रखने पर सर्वथा जड़ और मन्द साधक भी अपने में अद्‌भुत परिवर्तन अनुभव करता है। अब वह अपनी साधना छोड़ नहीं सकता। एक दिन के लिए भी ध्यान की साधना छूटने पर उसको ऐसा लगता है कि मानो आज उसका कुछ खो गया है। उसका मन उद्विग्न रहेगा।

१०. कुविचारों के निग्रह का सर्वोत्तम उपाय

जब मन रिक्त होता है, तभी कुविचार उसमें प्रवेश करने का प्रयास करते हैं। दुष्ट विचार का आना व्यभिचार का प्रारम्भ-बिन्दु है। भले ही आपने केवल वासनामयी दृष्टि से देखा भर है, किन्तु आपने मानसिक व्यभिचार कर लिया। मानसिक क्रिया ही वास्तविक क्रिया है। स्मरण रहे कि ईश्वर हमारी भावना के आधार पर ही न्याय करता है। संसार में मनुष्य तो स्थूल क्रिया को देख कर न्याय करते हैं। इसलिए व्यक्ति की भावना का ध्यान रखना चाहिए। तब आप कोई भूल नहीं करेंगे।

मन को सर्वदा व्यस्त रखिए। तब बुरे विचार प्रवेश नहीं करेंगे। खाली मन भूत का कारखाना होता है। प्रतिक्षण मन का सावधानीपूर्वक निरीक्षण करें।

सीना-पिरोना, झाड़ू लगाना, बरतन मलना, पानी भरना, पढ़ना-लिखना, ध्यान करना, माला फेरना, भजन गाना, प्रार्थना करना, बड़ों की या रोगियों की सेवा करना आदि किसी-न-किसी कार्य में अपने मन को सदा व्यस्त रखें। गपशप और व्यर्थ के विवाद से बच कर रहें। गीता, उपनिषद्, योगवासिष्ठ-जैसे ग्रन्थों में सन्निहित उत्तम विचार ही मन में रखें।

११. विचार के दैनिक अनुशासन

मन बड़ा नटखट होता है। वह चंचल बन्दर की तरह है। उसे प्रतिदिन अनुशासन में रखना आवश्यक है। तभी वह धीरे-धीरे हमारे वश में आता है।

मन को व्यावहारिक प्रशिक्षण देने से हम उसमें असद्विचारों और असत्कार्यों को उठने से रोक सकते हैं तथा जो असद्विचार और असत्कर्म पुनरावृत्ति के कारण उठे हैं, उन्हें टाल सकते हैं।

मानसिक विश्रान्ति का यहाँ एक सुन्दर दैनिक कार्यक्रम दे रहा हूँ, उससे आपके अन्दर भरपूर शक्ति और उत्साह भर जायेगा।

आँखें बन्द करें। जो विषय आपको अत्यन्त रुचिकर हो, उस पर सोचें। इतने से ही मन को आश्चर्यजनक रूप से आराम मिलेगा। महान् हिमालय, पावनी गंगा, कश्मीर का मोहक प्राकृतिक सौन्दर्य, ताजमहल, कोलकाता का विक्टोरिया मेमोरियल हाल, सूर्योदय, सूर्यास्त, विशाल सागर या अनन्त नीला आकाश—इनमें से किसी का भी चिन्तन करें।

कल्पना करें कि इस विशाल आत्मसागर में यह सारा संसार और आप तैर रहे हैं। अनुभव करें कि आपको उस परम सत्ता का स्पर्श मिल रहा है। अनुभव कीजिए कि विश्व का प्राण आपके द्वारा श्वास ले रहा है, धड़क रहा है और स्पन्दित हो रहा है। अनुभव कीजिए कि भगवान् हिरण्यगर्भ आपको अपने विशाल वक्षस्थल पर झुला रहे हैं। तब आँखें खोलिए। परम मानसिक शान्ति, स्फूर्ति और शक्ति प्रतीत होगी। इनका अभ्यास और अनुभव कीजिए।

१२. विचार और सर्प का दृष्टान्त

जिस प्रकार फल बीज से उत्पन्न होते हैं, उसी प्रकार प्रत्येक कृति विचार से पैदा होती है। सद्विचार सत्कृति को और असद्विचार असत्कृति को जन्म देते हैं।

सद्विचार को ही चित्त में बसाइए। असद्विचारों को भगाइए। सत्संग, धर्मग्रन्थों का वाचन, प्रार्थना आदि के द्वारा यदि सद्विचारों को विकसित करेंगे तो असद्विचार स्वयं नष्ट हो जायेंगे।

जिस प्रकार जूते में चुभने वाले कंकड़ को आप तुरन्त झाड़ देते हैं, उसी प्रकार किसी भी असद्विचार को अपने चित्त में सुगमता से निकाल फेंकने की आपमें क्षमता

होनी चाहिए। तभी समझें कि आपने विचार-नियमन की पर्याप्त शक्ति संचित कर ली है और तभी यह कहा जा सकेगा कि अध्यात्म-मार्ग में आपने थोड़ी-बहुत सच्ची प्रगति की है।

जब आप साँप के फन पर लाठी से प्रहार करेंगे तो वह कुछ काल तक निश्चेष्ट पड़ा रहेगा। आप समझेंगे कि वह मर गया, पर अकस्मात् वह शिर उठा कर भाग जायेगा। इसी प्रकार जिन विचारों को आपने दबा दिया था, कुचल दिया था, वे कुछ समय में शक्ति संचित करके फिर शिर उठाते हैं। इसलिए उन्हें बार-बार मार कर सर्वथा नष्ट कर देना चाहिए, जिससे कि वे पुनः उठ न सकें।

१३. विचार-जय से विश्व-विजय

विचार या संकल्पों को वश में कीजिए। कल्पनाएँ या दिवास्वप्न छोड़िए। मनोनाश हो जायेगा। संकल्पों से निवृत्ति ही मोक्ष है। मन तब नष्ट होगा, जब कल्पनाएँ समाप्त होंगी।

कल्पना के ही कारण इस भ्रमात्मक संसार का हमें अनुभव हो रहा है। कल्पनाएँ ज्यों-ही सर्वथा नष्ट हो जायेंगी, त्यों-ही वह अनुभव भी मिट जायेगा।

विचारों पर विजय पाने का अर्थ है कि सभी सीमाओं, दुर्बलताओं, अज्ञान और मृत्यु पर विजय पाना। मशीनगन, बन्दूक आदि के द्वारा किये जाने वाले बाहरी युद्ध से मन के साथ यह आन्तरिक युद्ध बहुत भयानक है। शस्त्र के बल पर विश्व को जीतने से भी विचारों को जीतना अधिक कठिन है। विचारों पर विजय प्राप्त कीजिए, विश्व पर विजय अपने-आप प्राप्त हो जायेगी।

१४. विचार-शक्ति के लिए अध्यात्म-मार्ग

विचारों का बाह्य विषयों की ओर बहना स्वाभाविक है। मन बड़ी सरलता से सांसारिक विषयों का चिन्तन कर सकता है। यह उसका स्वभाव ही है।

मानसिक शक्तियाँ बड़ी सहजता से शरीरगत चिन्ताओं में और पुरानी अभ्यस्त लकीरों पर दौड़ने लगती हैं। ईश्वर के विषय में सोचना उन्हें बड़ा कठिन प्रतीत होता है। व्यावहारिकता में फँसे हुए सांसारिक चित्त के लिए यह बहुत ही दुःसाध्य है।

मन को प्रापंचिक विषयों से विमुख करना, बाह्य विषयों की ओर दौड़ने से उसे रोकना और ईश्वर में लगाना उतना ही कठिन है जितना गंगा नदी को गंगासागर की ओर

बहने से रोक कर उल्टे गंगोत्तरी की ओर प्रवाहित करना। यह यमुना के प्रवाह के विरुद्ध तैरने जैसा है।

फिर भी यदि जन्म-मृत्यु के चक्र से बचना चाहें तो कठोर परिश्रम और त्याग करके मन को, उसकी इच्छा के विरुद्ध, ईश्वर के प्रति मोड़ने का अभ्यास करना ही होगा।

१५. विचार-नियमन में जागृति का स्थान

प्रारम्भ में चित्त को किसी एक विचार में स्थिर करना बहुत कठिन होता है। विचारों की संख्या घटाइए। किसी एक विषय पर सोचने का प्रयत्न कीजिए।

गुलाब के विषय में सोचना है तो सभी विचार मात्र गुलाब के सम्बन्ध में आने दें। विश्व के विभिन्न भागों में उगने वाले गुलाबों के विभिन्न भेदों का विचार करें। गुलाब के उपयोग की बात सोचें। उससे क्या-क्या बनता है, विचार करें। हाँ, कुछ दूसरे पुष्पों की बात भी आने दे सकते हैं; परन्तु फल, शाक-जैसे दूसरे पदार्थों का विचार कदापि न आने दें।

मन की निरुद्देश्य भटकने कि स्थिति को रोकें। गुलाब का विचार करने बैठें तो मन को उसे छोड़ कर इधर-उधर भ्रमण न करने दें। ऐसा करते-करते एक ही विषय में मन को स्थिर करना सीख जायेंगे। हाँ, प्रतिदिन इसका अभ्यास करते रहना चाहिए। विचार-नियमन में अत्यन्त सजगता की आवश्यकता है।

१६. विचारों का निरीक्षण करें, उनका अध्यात्मीकरण करें

विचारों का सदा निरीक्षण करें। उनका नियमन करें। विचारों के साक्षी बने रहें। विचारों से ऊपर उठें और निर्विचार शुद्ध चैतन्य की स्थिति में निवास करें।

अचेतन मन में छिपे हुए सूक्ष्म संस्कार, वृत्तियाँ, कामनाएँ और भावनाएँ सचेतन और जाग्रत जीवन में बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं।

उन्हें शुद्ध और उत्कृष्ट बनाना चाहिए। उन्हें आध्यात्मिक मोड़ देना चाहिए। शुभ विचारों को ही सुनिए। भले और नेक विचारों को ही देखिए। शुभ विचार का ही चिन्तन कीजिए। शुभ ही बोलिए। शुभ का ही ध्यान कीजिए। शुभ को समझिए। शुभ को जानिए।

भय, तीव्र अनिच्छा, दबा हुआ द्वेष, पूर्वाग्रह, असहिष्णुता, क्रोध, वासना—ये सब हमारे अवचेतन मन की क्रिया को विचलित करते हैं। सद्गुणों का अर्जन करो। अवचेतन मन को शुद्ध करो, उन्नत बनाओ, शक्तिशाली बनाओ। लोभ, मोह आदि वृत्तियाँ मन को दास बना लेती हैं। उसे (मन को) उनसे मुक्त करके मूल शुद्ध रूप में पुनः बदल देना चाहिए जिससे वह सत्य का विचार और ध्यानाभ्यास कर सके। सारी निम्न वृत्तियाँ भौतिक शरीर और मानसिक स्तर की ही होती हैं।

वासनाओं के अभाव में जब मन का कार्य-व्यापार बन्द हो जाता है, तब मनोनाश की स्थिति का उदय होता है।

अष्टम अध्याय

विचार-संस्कार के आदर्श

१. विचार और अन्तःसंस्कार

मन में इच्छा के उदय होते ही उसकी पूर्ति का प्रयत्न न कीजिए। विवेक, सम्यक् विश्लेषण और तटस्थता के साथ उसको अस्वीकार कर दीजिए। इससे मन का समाधान प्राप्त होता है और सतत अभ्यास से मानसिक शक्ति-संचय होता है। मन क्षीण होता जाता है। मन के भटकने पर सीधी रोक लगती है। बाहर भागने की उसकी वृत्ति अवरुद्ध होती है।

इच्छाओं के दूर होते ही विचार भी स्वयं समाप्त हो जाते हैं। विषय-सेवन के दोषों का पुनः-पुनः विचार करते रहने से नानाविध भोग-विषयों की ओर से मन परावृत होता है और ब्रह्म में स्थिर होता है।

शम के अभ्यास से चक्षु, श्रोत्र, घ्राण, रसना और त्वक्—इन पंच ज्ञानेन्द्रियों को नियन्त्रित करना होता है। शम शान्ति का नाम है जो वासनाओं के सतत निरोध से उत्पन्न होता है।

२. अस्वस्थ विचार और सजगता

दुष्ट विचारों के गम्भीर घातक परिणामों पर मन में विचार करते रहें। इससे आप उन दुष्ट विचारों के आक्रमण से सावधान रह सकेंगे। जिस क्षण में वे आयें, आप ईश्वर-सम्बन्धी विचारों, प्रार्थना अथवा जप की ओर मन की दिशा परिवर्तित करने का प्रयत्न कीजिए। यदि दुष्ट विचारों को दूर करने की आपकी अत्यन्त प्रबल इच्छा रही तो वह इतनी सजग रहेगी कि स्वप्न में यदि कुविचार आयें तो आपकी निद्रा तुरन्त जाती रहेगी। आप जाग उठेंगे। ऐसी स्थिति में जाग्रति में यदि शत्रु आये तो उसका सामना करना कठिन न होगा, यदि आप केवल पर्याप्त सजग रहें।

आपको अपने मन को कुनिर्माण और गर्भस्राव से बचाये रखना चाहिए। वह तो खेलने वाले बच्चे के समान है। उसकी उद्दाम शक्तियों को ऐसा मोड़ दें कि वह सत्य के प्रसारण की अविरोधी प्रणालिका बन जाये। सत्त्वगुण से मन को भर देना

चाहिए। उसे सत्य अथवा ईश्वर के विषय में चिन्तन करने का सतत अभ्यास कराना चाहिए।

अध्यात्म-मार्ग में यदि शीघ्र प्रगति करना चाहें तो अपने प्रत्येक विचार पर निगाह रखें। खाली मन खिन्न रहता है। वह तो भूत का डेरा है। विचारवान् बनिए। मन पर चौकसी रखिए। प्रत्येक भावना और प्रत्येक विचार की जाँच करते रहिए।

नैसर्गिक वृत्तियों का अध्यात्मीकरण कीजिए, उन्नत कीजिए। दुष्ट वृत्तियाँ बहुत ही भयानक तस्कर हैं। इस तस्कर का ज्ञान-खड्ग से संहार कीजिए। प्रतिदिन अपने चित्त में ईश्वरीय स्पन्दन और दिव्य विचारों को उत्पन्न कीजिए। अपने विचारों को शुद्ध, शक्तिशाली, उदात्त और सुनिश्चित बनाइए। अपार आत्म-शक्ति और आत्म-शान्ति मिलेगी।

प्रत्येक विचार विधायक और श्रेष्ठ ही हों। विचार मानस-रश्मियों के वक्र प्रत्यावर्तन मात्र हैं। विचार मात्र का विनाश कीजिए। उस ज्योतियों की ज्योति परमात्मा में प्रवेश कीजिए। आत्म-साक्षात्कार प्राप्त करने की यदि वांछा है तो कल्पनाओं और ऊहापोहों का त्याग कीजिए। अपनी भावनाओं को शुद्ध तथा नियन्त्रित कीजिए। इस चेतन जीवन के नीचे एक अत्यन्त विशाल अवचेतन जीवन है।

प्रत्येक आदत का मूल-स्रोत वह अवचेतन मन है। इस विषयनिष्ठ चेतना के सामान्य जीवन की अपेक्षा वह अवचेतन जीवन अधिक प्रबल है। अवचेतन मन की गहराई को भी योगाभ्यास के द्वारा प्रभावित, नियन्त्रित और शुद्ध किया जा सकता है।

कोई एक दुर्गुण लीजिए। उसके विपरीत गुण का प्रतिदिन प्रातः चिन्तन कीजिए। दिन में भी उस पर विचार करते रहिए। दुर्गुण शीघ्र ही दूर हो जायेगा। प्रातः और दिन में दया पर ध्यान कीजिए। आप दयालु बन जायेंगे।

मान लीजिए आपको सप्ताह में तीन के स्थान में माह में एक बार ही दुर्विचार आने लगा है, कोई भी दुर्गुण सप्ताह में एक बार के स्थान में महीने में एक बार आता है तो यह आपकी प्रगति का लक्षण है, बढ़ते हुए मनोबल का चिह्न है तथा विकसित आध्यात्मिक शक्ति का द्योतक है। खूब प्रसन्न रहो। आध्यात्मिक प्रगति को दैनन्दिनी में लिखो।

३. यौगिक विचार-संस्कार से आत्म-विकास

योगाभ्यास-काल में जो अलौकिक सिद्धियाँ दृष्टिगोचर होती हैं और योगाभ्यासी जिस सूक्ष्मतर धरातल का अनुभव करता है, वह सब सामान्यतया एक चमत्कार माना जाता है और सन्देह की दृष्टि से देखा जाता है। योग कोई काल्पनिक नहीं है, न वह असाधारण ही है। उसका उद्देश्य तो मनुष्य की क्षमताओं का समग्र विकास करना है। वह परिपूर्ण और सम्पन्न जीवन का चिरपरीक्षित और युक्तियुक्त मार्ग है और यह स्वाभाविक ही है कि भावी जगत् का प्रत्येक मानव उसका अनुसरण करेगा।

योग की सभी पद्धतियों के आधार में नैतिक शिक्षा और सदाचार है। दुर्गुणों का निरसन तथा गुण-विशेष का विकास योग-सोपान की प्रथम सीढ़ी है। दूसरी सीढ़ी है नित्यव्रताचरण और सद्वर्तन के द्वारा चारित्र्य को शुद्ध और सुदृढ़ बना कर स्वभाव को अनुशासित बनाना।

इस प्रकार व्यवस्थित तथा पवित्र नैतिक चारित्र्य के ठोस आधार पर योग का सारा ऊपरी भवन निर्मित होता है।

४. प्रतिस्थापन की पद्धति से विचार-संस्कार

कुविचारों के नाश के लिए प्रतिस्थापन का उपाय बहुत ही सरल और प्रभावकर है। अपने चित्त-रूपी उपवन में दया, प्रेम, पवित्रता, क्षमा, सहनशीलता, उदारता, नम्रता आदि सद्गुणों का अर्जन कीजिए; ईर्ष्या, द्वेष, घृणा, वासना, क्रोध, लोभ, गर्व आदि दुर्गुण स्वयं विनष्ट हो जायेंगे।

दुर्गुणों का सीधा सामना करके उनका नाश करना कठिन है। संकल्प-शक्ति पर अनावश्यक जोर पड़ेगा और शक्ति का अपव्यय होगा।

५. विचार-संस्कार के आध्यात्मिक उपाय

दुर्विचार पर बार-बार चिन्तन करते हैं, तो उसे नव-शक्ति प्राप्त होती है। उसमें गति आ जाती है। इसलिए उसे एकदम हटा देना चाहिए।

यदि यह कठिन लगता हो तो ईश्वर-सम्बन्धी प्रतिलोम विचारों का चिन्तन आरम्भ करें। उदात्त और उन्नायक विचारों का अर्जन करें। दुर्विचार के प्रतिकार के लिए सद्विचारों का चिन्तन एक अमोघ प्रतिविष है।

यह पूर्वोक्त पद्धति से सरल है। सहस्रों बार भगवान् के नाम का पुनः-पुनः प्रतिदिन जप करते रहने पर सद्विचार को नव-शक्ति प्राप्त होती है। प्रतिदिन सहस्र बार **'अंह ब्रह्माऽस्मि'** का जप करें तो आपका यह विचार सुदृढ़ होगा कि आप आत्मा हैं। यह जो आज मानते हैं कि 'शरीर ही मैं हूँ', यह धारणा क्षीण से क्षीणतर होती जायेगी।

दुर्विचारों के प्रवेश करने पर उन्हें हटाने के लिए अपने संकल्प-बल का प्रयोग न कीजिए। इससे आपकी शक्ति का ही अपक्षय होगा। संकल्प पर जोर पड़ेगा। आप थक जायेंगे। उन्हें भगाने का जितना-जितना आप प्रयत्न करते जायेंगे, उतना ही उतना वे नव-द्विगुणित शक्ति से वापस आयेंगे और अधिक शीघ्र आयेंगे। विचार अधिक शक्तिशाली बन जायेंगे।

अतः उनके प्रति उदासीन रहिए। शान्त रहिए। वे शीघ्र ही चले जायेंगे। अथवा उनके स्थान में उनके विपरीत सद्गुण या सद्विचार स्थापित कीजिए। इसे प्रतिपक्ष-भावना-पद्धति कहते हैं। अथवा ईश्वर के चित्र का दर्शन कीजिए, या पूरी शक्ति से मन्त्र-पाठ किये जाइए अथवा ईश्वर-प्रार्थना कीजिए।

६. विचार-संस्कार का महत्त्व

विचार-संस्कार बहुत महत्त्वपूर्ण विषय है। इस कला या विद्या को बहुत ही कम लोग जानते हैं। यहाँ तक कि तथाकथित सुशिक्षित लोग भी इस आधारभूत विषय से सर्वथा अनभिज्ञ होते हैं।

सभी विचार-विक्षेप के शिकार हैं। सभी प्रकार के नाना विचार उनकी मानसिक निर्माणशाला में बनते-बिगड़ते रहते हैं, आते-जाते रहते हैं। न उनमें कोई संगति रहती है, न विवेक। न कोई तालमेल ही होता है, न नियम ही। सभी एक प्रकार की अव्यवस्था और उलझन में फँसे हुए हैं। विचारों में स्पष्टता नहीं होती।

आप किसी विषय पर व्यवस्थित तथा क्रमबद्ध रूप से दो मिनट भी चिन्तन नहीं कर पाते हैं। विचारों से सम्बन्धित नियम या सिद्धान्त आप जानते ही नहीं। मनोजगत् के तत्त्व आपको विदित नहीं हैं।

हमारे अन्दर एक पूर्ण वन्यपशु-पंजर है। सभी प्रकार के वैषयिक विचार विषयी मन में प्रवेश करके तथा विजयी होने के लिए सदा संघर्षरत रहते हैं। चक्षुरिन्द्रिय अपने ही विषयों को आगे लाना चाहती है। सुन्दर नैसर्गिक दृश्य देखने को वह उत्सुक है। श्रोत्रेन्द्रिय अपने विषय के लिए लालायित रहती है। इन्द्रियाँ सर्वदा हीन, निम्नस्तरीय,

वासनात्मक तथा ईर्ष्या, द्वेष, भय आदि विकारयुक्त विषयों को ही मन में प्रवेश कराना चाहती हैं। कई लोग तो ऐसे हैं जो एक मिनट भी उदात्त और दिव्य विचार ला नहीं पाते। उनके मन का गठन कुछ ऐसा हुआ है कि उनकी मानसिक शक्ति वैषयिक पगडण्डी पर ही दौड़ती है।

७. विचारों का युद्ध

विचार-संस्कार का प्रारम्भ शुद्ध और अशुद्ध विचारों के आन्तरिक युद्ध से होता है। अपवित्र विचार मन की निर्माणशाला में प्रवेश करने का बार-बार प्रयत्न करता है और बलपूर्वक कहता है, 'अरे नादान! प्रारम्भ में तुमने मुझे शरण दी। तुम मेरा स्वागत करते रहे। मेरा हार्दिक सत्कार किया। तुम्हारे मन की अवर-भूमि में मुझे बने रहने का पूरा-पूरा अधिकार है। अब मुझ पर क्यों इतने क्रूर हो गये? तुम्हें रेस्टोराँ, होटल, सिनेमा, थियेटर, नाचघर, शराब की दुकान आदि में जाने के लिए एक धक्का ही तो मैं देता था। मेरे कारण से तुम्हारा मन विभिन्न मनोरंजन प्राप्त करता रहा। अब इतने कृतघ्न क्यों हो गये? मैं तुम्हारा प्रतिरोध करूँगा, डटा रहूँगा और बार-बार आता रहूँगा। चाहे जो कर लो। पुरानी आदत से तुम विवश हो, दुर्बल हो। मुझे रोकने की तुममें शक्ति कहाँ?'

अन्ततोगत्वा शुद्ध विचार ही विजयी होता है। रज और तम गुणों से सत्त्वगुण बलशाली है। भावात्मक वृत्ति अभावात्मक वृत्ति पर विजयी होती है।

८. सद्विचार : पहली पूर्णता

विचार एक अच्छा सेवक है। वह एक साधन है, उपकरण है। उसका युक्तिपूर्वक ठीक से उपयोग करना चाहिए। सुख-सन्तोष के लिए प्रथम आवश्यक गुण है विचारों का नियन्त्रण।

आपके विचार आपके मुख पर मुद्रित होते हैं। मानव और देव को जोड़ने वाला सेतु यह विचार है। आपका शरीर, आपका धन्धा, आपका घर—सभी तो आपके अपने मन के विचार हैं। विचार गतिशील शक्ति है। सद्विचार पहली पूर्णता है। विचार वास्तविक शक्ति है।

९. विचारों को सुधारें और शुद्ध बनें

अपने मन से समस्त अनावश्यक, अनुपयोगी और घृणित विचारों को निकाल दीजिए। अनुपयोगी विचार आपकी आध्यात्मिक उन्नति को अवरुद्ध करते हैं, घृणित विचार आध्यात्मिक प्रगति के मार्ग के रोड़े हैं। आपके मन में जब अनुपयोगी विचार हैं, तब आप ईश्वर से बहुत दूर हैं। अतएव ईश्वरीय विचार प्रतिस्थापित करें।

जो विचार उपयोगी और सहायक हों, उन्हीं का चिन्तन करें। आध्यात्मिक विकास और प्रगति में उपयोगी विचार उन्नति का पथ है। मन को अपनी पुरानी लकीर पर आदतों की ओर भागने न दें। सावधानी से देखते रहें।

आत्मनिरीक्षण के द्वारा हीन विचार, अनुपयोगी विचार, व्यर्थ विचार, अशुद्ध विचार, वैषयिक विचार तथा ईर्ष्या, द्वेष, स्वार्थ आदि के सभी विचार दूर करें। असंगत और बेसुरे घातक विचारों का नाश करना चाहिए। सर्वदा शुद्ध, प्रेममय, उदात्त और ईश्वरीय विचार का स्वरूप रचनात्मक होना चाहिए। वह बलवान्, विधायक और सुनिश्चित होना चाहिए।

जो विचार करें, उसका चित्र मनस्पटल पर स्पष्ट होना चाहिए, समझ-बूझ का होना चाहिए। उससे दूसरों को शान्ति और समाधान मिलना चाहिए। उससे किसी एक को भी लेशमात्र दुःख और पीड़ा नहीं होनी चाहिए। तब आप इस धरती पर एक सद्भाग्यसम्पन्न पुरुष होंगे, समर्थ व्यक्ति होंगे। ईसामसीह और भगवान् बुद्ध की भाँति आप सैकड़ों की सहायता कर सकेंगे, हजारों का उपचार कर सकेंगे, अनेकानेक लोगों का उद्धार कर सकेंगे।

जिस प्रकार आप अपने उद्यान में मालती, गुलाब, नलिनी, केतकी आदि-आदि फूल के पौधे लगाते हैं उसी तरह अन्तःकरण रूप इस विशाल उपवन में प्रेम, दया, करुणा, पवित्रता आदि शान्तिमय पुष्पों वाले विचारवर्तन अपनाइए। इस उपवन को आत्मनिरीक्षण-रूपी जल से सींचना होगा। ध्यान और श्रेष्ठ विचारों द्वारा व्यर्थ, अनुपयोगी और असंगत विचारों के काँटे और घास-फूस हटानी होगी।

१०. पर-दोष-दर्शन छोड़ें

मन का स्वभाव बड़ा विचित्र है। वह जिस विषय पर गम्भीरता से चिन्तन करता है, उसी में तद्रूप हो जाता है; इसीलिए यदि आप दूसरों के दोष और कमियों को देखने लगें तो आपका मन कम-से-कम उतने समय के लिए उन्हीं दोषों और कमियों का रूप ले लेता है।

जो इस मनोवैज्ञानिक नियम से परिचित हैं, वे कभी दूसरों की भूलें और चारित्र्य-दोष देखने नहीं जायेंगे; अपितु दूसरों के गुण ही देखेंगे और सदा उन्हीं की प्रशंसा करेंगे। इस गुण के अभ्यास से एकाग्रता की शक्ति बढ़ती है और योग तथा अध्यात्म में मनुष्य आगे बढ़ सकता है।

११. अन्तिम विचार के अनुरूप अगला जन्म

मनुष्य के अन्तिम क्षण में जो विचार रहेगा, उसी के अनुसार उसका भविष्य बनेगा। अन्तिम विचार के अनुसार ही उसको आगामी जन्म मिलेगा।

भगवद्गीता (८-६) में भगवान् श्री कृष्ण कहते हैं :

यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः॥

—मनुष्य अन्त काल में जो भाव रखते हुए शरीर-त्याग करता है, हे कौन्तेय! वह उसी भाव को प्राप्त करता है; क्योंकि वह सदा उसी भाव से भावित रहा है।

अजामिल ने अपना सच्चारित्र्य छोड़ कर गर्हणीय जीवन यापन करना आरम्भ किया। वह पापमय प्रवृत्तियों में गहरा रँग गया और चोरी-डकैती भी करने लगा। एक वेश्या का गुलाम बन गया। दश बच्चों का पिता बना। उसने अपने अन्तिम लड़के का नाम 'नारायण' रखा।

जब मृत्यु-काल आया तो वह अपने अन्तिम पुत्र की बात सोचने लगा। अजामिल के सम्मुख तीन भयानक यमदूत आ खड़े हुए। भयभीत हो कर अजामिल अपने अन्तिम पुत्र को आवाज देने लगा—"ओ नारायण!"

केवल नारायण के नामोच्चारण मात्र से ही हरिदूत दौड़े आये और यमदूतों को हटा कर अजामिल को वैकुण्ठ ले गये।

शिशुपाल की आत्मा भी उज्ज्वल ज्योति के रूप में प्रभु में जा समायी। यह निन्दक शिशुपाल आजीवन भगवान् कृष्ण की निन्दा ही करता रहा और अन्त में प्रभु में ही लीन हुआ।

भृंग जिस कीड़े को ले जा कर अपने घर में रखता है, वह कीड़ा कुछ समय में स्वयं भृंग बन जाता है; उसी प्रकार जो व्यक्ति भगवान् की निन्दा में अपना सारा ध्यान केन्द्रित करता है, वह भी अपने सारे पाप धो डालता है और भगवान् को उसी प्रकार प्राप्त करता है जिस प्रकार अन्य भक्त जन नियमित भक्ति के द्वारा प्राप्त करते हैं—जैसे गोपियों ने काम-भावना से, कंस ने भय से, शिशुपाल ने द्वेष और घृणा से तथा नारद ने प्रेम से पाया।

श्री कृष्ण गीता (८-१४,१५ और १६) में कहते हैं :

अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः॥

—जो व्यक्ति अनन्य चित्त हो कर सर्वदा मेरा स्मरण करता है, उस नित्य युक्त योगी के लिए, हे पार्थ! मैं सुलभ हूँ।

मामुपेत्य पुनर्जन्म दुःखालयमशाश्वतम्।
नाप्नुवन्ति महात्मानः संसिद्धिं परमां गताः॥

—इस प्रकार मुझे प्राप्त करने पर वह दुःखमय अनित्य संसार में पुनर्जन्म को प्राप्त नहीं होता, वह महात्मा परम सिद्धि पा चुका है।

आब्रह्मभुवनाल्लोकाः पुनरावर्तिनोऽर्जुन।
मामुपेत्य तु कौन्तेय पुनर्जन्म न विद्यते॥

—हे अर्जुन! ब्रह्मलोक पर्यन्त सभी लोक अनित्य हैं, उनमें जा कर पुनः लौटना होता है; परन्तु मुझे प्राप्त होने के बाद पुनर्जन्म नहीं है।

इसीलिए :

तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयम्॥

—सदा-सर्वदा मेरा ही स्मरण करो और प्रयत्न करते रहो। इस प्रकार मन और बुद्धि मुझमें लीन किये रहने से निश्चित ही मुझको प्राप्त होओगे (गीता : ८-७)।

सामान्य गृहस्थ पुरुष भी सांसारिक कृत्य करते हुए सदा हरि-स्मरण बनाये रखता है तो यह उसे अन्त समय में ईश्वर-स्मरण करने की सहज प्रेरणा देगा।

भगवान् श्री कृष्ण कहते हैं :

अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसा नान्यगामिना।
परमं पुरुषं दिव्यं याति पार्थानुचिन्तयन्॥

—जो व्यक्ति अभ्यास करते-करते अचंचल मन से परम पुरुष का अनुचिन्तन करता है, हे पार्थ! वह उस दिव्य परम पुरुष को ही प्राप्त होता है (गीता : ८-८)।

भगवान् श्री कृष्ण आगे कहते हैं :

अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम्।
यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः॥

—जो व्यक्ति अन्त काल में मेरी परम सत्ता का ही विचार करते हुए, श्री कृष्ण या नारायण के रूप में मेरा ध्यान करते हुए शरीर का त्याग करते हैं, वे मुझे प्राप्त होते हैं, मेरे भाव को पा लेते हैं, इसमें शंका नहीं (गीता : ८-५)।

गीता में अन्यत्र कहा है :

एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ नैनां प्राप्य विमुह्यति।
स्थित्वास्यामन्तकालेऽपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति॥

—जो अन्त समय में भी अपना मन मुझमें स्थिर कर देता है, सर्वसंन्यास की उस ब्राह्मी-स्थिति को प्राप्त करने पर फिर वह मोहित नहीं होता (गीता : २-७२)।

जो व्यक्ति अपने जीवन-काल में सुँघनी का सेवन करने का आदी होता है, उसकी मृत्यु से पहले अचेतनावस्था में भी उसकी अँगुलियाँ सुँघनी सूँघने-जैसी हलचल करती हैं। इसका अर्थ यह है कि उसमें सुँघनी के सेवन की बहुत पक्की आदत पड़ी हुई है।

कामुक व्यक्ति के मन में अन्तिम क्षण में अपनी प्रिया का ही विचार आयेगा। पुराने शराबी का अन्तिम विचार शराब का एक घूँट पीने का होगा। लोभी साहूकार का अन्तिम विचार धन से सम्बन्धित होगा। अपने पुत्र के प्रति अत्यन्त आसक्त माता का अन्तिम विचार पुत्र-सम्बन्धी होगा और योद्धा का अन्तिम विचार शत्रु पर गोली चलाना ही होगा।

राजा भरत ने दया से प्रेरित हो कर हिरन का एक बच्चा पाल लिया था; किन्तु उसके प्रति मन में आसक्ति पैदा हो गयी और अन्त काल में उसके मन में उसी हिरन का

विचार आया, इसलिए उसे अगला जन्म हिरन की योनि में लेना पड़ा; लेकिन चूँकि वह अत्यन्त सिद्ध व्यक्ति था, इसलिए पूर्व-जन्म का स्मरण उसे रहा।

निरन्तर अभ्यास के द्वारा जीवन-भर जिसने हरि-स्मरण की आदत डाली होगी, मन को हरिमय बनाया होगा, उसी का अन्तिम विचार हरिमय हो सकेगा। एक दिन, दो दिन या महीने, दो महीने के अभ्यास से सधने वाली यह बात नहीं है। यह तो जीवन-भर के सुदीर्घ अभ्यास तथा प्रयास का फल है।

अन्तिम विचार जैसा होगा, वैसा ही अगला जन्म होगा। जीवन-भर जो विचार प्रमुख रहा होगा, वही विचार अन्तिम समय में आयेगा। अन्तिम समय में जो विचार प्रमुख रूप से रहता है, उसने सामान्य जीवन में बहुत प्रमुख भाग लिया होगा, सबके अधिक ध्यान खींचा होगा। उस अन्तिम विचार के अनुरूप ही अगला जन्म मिलने वाला है। मनुष्य जो सोचता है, वही बनता है।

१२. सात्त्विक विचार की पृष्ठभूमि

अधिकांश लोग कोई-न-कोई स्थूल, ठोस पदार्थ चाहते हैं, जिसका वे सहारा ले सकें, जो उनके ऊपर अभिभूत हो सके, अर्थात् जिसमें वे अपना विचार-चिन्तन स्थिर कर सकें, जीवन-भर जिसे चिन्तन का केन्द्र बना सकें। यह मन का अपना स्वभाव ही है। मन को स्थिर करने के लिए विचार की कोई एक पृष्ठभूमि होनी चाहिए।

इसके लिए किसी सात्त्विक मनोभाव का आधार अपनाइए। आप जिस पर भी पूरे मन से विचार करने लगते हैं, आपका मन वही रूप ले लेता है। सन्तरे का चिन्तन चला, तो मन सन्तरे का रूप ले लेता है। मुरलीधर श्री कृष्ण का चिन्तन चला, तो मन तद्रूप होता है; इसलिए मन को सही अभ्यास कराना चाहिए और उसे तदाकार होने के लिए कोई सात्त्विक आधार ही देना चाहिए।

अपने अन्तिम ध्येय (मुक्ति) की प्राप्ति के लिए यह आवश्यक है कि मन को सात्त्विक अधिष्ठान दें। यदि आप भगवान् श्री कृष्ण के भक्त हैं, तो श्री कृष्ण के चित्र की पृष्ठभूमि का आधार रखिए और उनके नाम के प्रसिद्ध मन्त्र **'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय'** का जप कीजिए और उनका गुणगान कीजिए। यदि आप निर्गुण उपासक (वेदान्ती) हैं, तो ॐ का विचार करना चाहिए और उसके अर्थ—अनन्त आलोक-निधि, सच्चिदानन्द, व्यापक, परिपूर्ण आत्मा—का चिन्तन करना चाहिए। सांसारिक कर्तव्य अवश्य कीजिए; पर ज्यों-ही मन खाली हो, तुरन्त अपने आधारभूत

विचार पर चले आइए—सगुण, निर्गुण जो भी आपको रुचिकर हो, आपके अनुकूल हो, आपकी साधना की क्षमता के अनुरूप हो। निरन्तर अभ्यास से मन उस वस्तु का आदी हो जाता है; फिर अनायाश मन उस पर स्वयं चला जायेगा।

यह बड़ा शोचनीय विषय है कि अधिकांश लोगों के जीवन में न कोई आदर्श होता है और न कोई कार्यक्रम ही; फिर सात्त्विक विचार के आधार की बात कहाँ से आये? निश्चय ही वे अपने जीवन में असफल रहेंगे। एक नवयुवती की वैचारिक पृष्ठभूमि क्या होगी? निश्चित ही विषय-प्रधान होगी। बूढ़ी माँ की वैचारिक पृष्ठभूमि अपने बच्चों और पोते-नातियों के प्रेम की रहेगी। अधिकांश लोगों की मनोभूमि घृणा और ईर्ष्या की रहती है।

तथाकथित पढ़े-लिखे लोगों के पास विद्यालयों के और अन्य कई प्रकार के प्रमाणपत्रों की ढेरी होगी, जो वास्तव में आध्यात्मिक ज्ञान की तुलना में खाक के बराबर होगी; किन्तु उनके जीवन में न तो कोई लक्ष्य होता है, न कार्यक्रम और न वैचारिक पृष्ठभूमि ही होती है। बड़ा अधिकारी है, सेवा से निवृत्त होता है तो तीसरा विवाह करके किसी दूसरे काम की खोज में निकलता है।

वैषयिक वृत्ति वाले व्यक्ति का मन सर्वदा वासनामय विचारों और ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध, प्रतिहिंसा आदि से ही भरा होता है। ये दो प्रकार के विचार सदा उसके मन में घर किये रहते हैं। इन द्विविध विचारों का वह दास हो जाता है। वह नहीं जानता है कि मन को कैसे मोड़ा जाये और उसे किसी उच्च तथा श्रेष्ठ विचार में कैसे लगाया जाये। उसे विचारों की रीति-नीति ही विदित नहीं। वह मन का स्वभाव और उसके कार्य करने की पद्धति से सर्वथा अनभिज्ञ होता है। यद्यपि उसकी भौतिक सम्पदा और विश्वविद्यालय में अर्जित उसका ज्ञान अपार है, फिर भी उसकी स्थिति बड़ी दयनीय होती है। उसमें विवेक जगा ही नहीं है। उसे साधु-सन्त, शास्त्र और ईश्वर पर श्रद्धा नहीं है। चूँकि उसका संकल्प-बल अत्यन्त क्षुद्र है; इसीलिए किसी दुष्ट विचार, कामना या प्रलोभन को वह रोक नहीं पाता। उसकी इस सांसारिक प्रमत्तता को, वैषयिक लालसा को तथा प्रापंचिक भ्रम को दूर करने का एकमात्र सर्वोत्तम उपाय है सतत सत्संग—साधु-संन्यासी, महात्माओं का सहवास।

कार्य-निवृत्त होने के पश्चात् प्रत्येक मनुष्य को अपनी एक वैचारिक पृष्ठभूमि बना लेनी चाहिए और ईश्वरीय चिन्तन तथा वेदान्त-विचार में मन लगाना चाहिए।

बिखरे और हलके विचारों की प्राचीन आदत के स्थान में अच्छे और व्यवस्थित विचारों की नयी आदत डालनी चाहिए।

प्रारम्भ में अच्छे विचारों का चिन्तन करने की वृत्ति निर्मित होगी। सतत अभ्यास से उपयोगी तथा सहायक विचारों के विधायक और निश्चित चिन्तन की आदत विकसित होगी। इसके लिए कठोर प्रयास करना होगा।

पुरानी आदतें पुनः-पुनः आती रहेंगी। जब तक एकमात्र सद्विचारों का नित्य चिन्तन दृढ़मूल नहीं हो जाता, तब तक सात्त्विक विचारों को, ईश्वर-सम्बन्धी विचारों को, गीता, श्री कृष्ण, प्रभु रामचन्द्र, उपनिषदों आदि के श्रेष्ठ विचारों को अपने मन में बार-बार भरते रहना होगा; तब नयी लकीर पड़ेगी, नये विचारों का संस्कार पक्का हो जायेगा। जिस प्रकार ग्रामोफोन की सूई रेकार्ड पर ध्वनि की सूक्ष्म रेखाएँ बना देती है, उसी प्रकार नये स्वस्थ विचार मन और मस्तिष्क में नयी रेखाएँ बना देंगे, नये संस्कार बनेंगे।

निर्विकल्प समाधि अथवा शुद्ध ज्ञान और आनन्दमय अवस्था ही है जो जन्म-मृत्यु के कारणीभूत समस्त विचारों को भस्म कर देती है। आसक्ति ही मृत्यु है। आपको ऐहिक सुख देने वाले शरीर, काम, पत्नी, बच्चे, सम्पत्ति, घर, स्थान, सामान आदि सब पर आपकी बड़ी आसक्ति है। जहाँ आसक्ति हैं वहाँ क्रोध, भय और वासना अवश्य रहती है। आसक्ति से बन्धन होता है। ईश्वर-दर्शन चाहते हैं तो सभी प्रकार की आसक्तियों से मुक्त होना पड़ेगा।

अनासक्ति का पहला कदम यह है कि हमें अपने शरीर से आसक्ति छोड़नी होगी, जिसके साथ आज इतने एकरूप हो बैठे हैं। 'आत्मा' शब्द की व्युत्पत्ति 'अत्' धातु से हुई है, जिसका अर्थ है 'सतत गमन'। इससे आत्मा शब्द का यह अर्थ हुआ कि वह सर्वदा अपने मूल रूप को—सत्-चित्-आनन्द रूप को—पाने के लिए विश्व के नाना रूपों और नामों के रूप में संचार करता रहता है।

१३. शुद्ध ज्ञान और विचार-मुक्ति

योग और ध्यान की दृढ़ साधना से, सतत अभ्यास से आप विकल्प-रहित और विचार-मुक्त हो सकते हैं। इस प्रकार का अचंचल चित्त वाला योगी सभाएँ करते फिरने वाले मनुष्य की अपेक्षा अधिक विश्व-कल्याण करता है। सामान्य लोगों को यह बात

समझ में आनी कठिन है। जब आप विकल्प-रहित हो जायेंगे, तब संसार के कण-कण में आप व्याप्त हो जायेंगे और संसार को पवित्र तथा समृद्ध करेंगे।

जड़भरत और वामदेव आदि इस प्रकार के निर्विकल्प ज्ञानियों का नाम आज भी स्मरण किया जाता है। उन्होंने कभी पुस्तकें नहीं लिखीं तथा शिष्य-मण्डली नहीं बनायी; फिर भी संसार के लोगों के चित्त पर इन विकल्प-रहित ज्ञानियों ने कितना भव्य और अद्भुत प्रभाव डाला है।

आप तभी ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे जब आप वैषयिक कामनाओं और अनैतिक मनःस्थितियों से मुक्त होंगे। ज्ञान-प्राप्ति के लिए वैषयिक आकांक्षाओं और अनीतिमय मनोदशाओं से अनासक्त होना, अलग हो जाना आवश्यक है; तभी दिव्य अवतरित होगा।

जिस प्रकार राष्ट्रपति का स्वागत करना होता है, तो बँगले की ठीक से सफाई करते हैं झाड़-झंखाड़ हटा कर बगीचे की सफाई करते हैं, उसी प्रकार राष्ट्रपतियों के राष्ट्रपति परब्रह्म के स्वागत में भी चित्त-भवन की खूब सफाई करनी चाहिए, उसमें से अनैतिक विचार-रूपी घास-फूस निकाल बाहर करनी चाहिए।

चित्त में जब कोई कामना उठती है तो सांसारिक मनुष्य उसका स्वागत करता है और उसकी पूर्ति की चेष्टा करता है, लेकिन साधक उसे विवेक के द्वारा तत्काल त्याग कर देता है। ज्ञानी जन कामना के बिन्दु मात्र को भी भयानक शत्रु मानते हैं; इसलिए किसी प्रकार की कामना को वे प्रश्रय नहीं देते। वे सर्वदा एकमात्र आत्मा में ही सन्तुष्ट रहते हैं।

चिन्तन का अर्थ ही कृति का प्रारम्भ है—चिन्तन अर्थात् बहिर्मुख होना, विषय-प्रवृत्त होना। चिन्तन का अर्थ है—भेदभाव करना, गुण-स्मरण करना, द्विगुणित करते जाना। चिन्तन ही संसार है। चिन्तन ही के कारण शरीर के साथ अपनापन दृढ़ हुआ करता है। चिन्तन से ही 'अहन्ता' और 'ममता' का विकास होता है।

चिन्तन काल-देश-सापेक्ष है। वैराग्य और अभ्यास के सहारे चिन्तन-प्रक्रिया को समाप्त कीजिए। शुद्ध चैतन्य में विलीन होइए। जहाँ चिन्तन नहीं है, वहाँ संकल्प नहीं है। वह परम पद की प्राप्ति है, जीवन्मुक्ति है।

नवम अध्याय

विचार से विचार-संचरण

१. विचार और जीवन

मनुष्य वैषयिक वस्तुओं का चिन्तन करता है और उनमें आसक्त हो जाता है। सोचता है कि फल खाना शरीर के लिए अच्छा है; तब फल खाने का प्रयास करता है। जब फल प्राप्त कर लेता है तो उसका आस्वाद लेता है; तब वह फल से निबद्ध हो जाता है और फल की लालसा बढ़ने लगती है। नित्य फल खाने की आदत विकसित होती है और बीच में कभी एक दिन फल प्राप्त नहीं होता तो उसे बड़ा कष्ट होने लगता है।

"चिन्तन से आसक्ति पैदा होती है, आसक्ति से कामना का जन्म होता है तथा कामना से क्रोध उत्पन्न होता है। जब किसी-न-किसी कारण से फल-प्राप्ति में, कामना-पूर्ति में बाधा आती है तो क्रोध आता है। क्रोध से मनुष्य भ्रमित हो जाता है और इसलिए स्मरण-शक्ति समाप्त हो जाती है, वह स्मृति-भ्रष्ट हो जाता है। स्मृति के नाश से बुद्धि नष्ट होती है और बुद्धि का नाश हुआ कि सर्वनाश ही हुआ समझो" (गीता : २-६२,६३)। इसलिए यदि स्थायी शान्ति चाहते हो तो विषय-चिन्तन करना त्याग दो। उसके स्थान में अमर और आनन्दमय आत्मा का चिन्तन किया करो।

कामना अपने-आपमें निरुपद्रवी है। चिन्तन के कारण उसमें बिजली-सी शक्ति पैदा होती है और तब वह प्रलय मचा देती है। मनुष्य ऐन्द्रिय सुख देने वाले विषयों में रमता है। वह कल्पना करता है कि उन विषयों में से उसे बहुत बड़ा सुख मिलेगा। कल्पना कामना से सहयोग करती है। तब कामनाओं में प्राण-संचार हो जाता है तथा उसमें गति आ जाती है। मायामुग्ध जीव पर वे दोनों भयंकर आक्रमण करती हैं।

२. विचार और चारित्र्य

मनुष्य परिस्थितियों से सीमित प्राणी नहीं है। उसकी परिस्थिति के निर्माता तो उसके अपने विचार हैं। चरित्रवान् पुरुष चाहे जिस परिस्थिति में हो, अपना जीवन बना लेता है। वह निष्ठा के साथ अध्यवसाय करता है और धीरे-धीरे प्रगति करता है। वह पीछे मुड़ कर नहीं देखता और आगे देख कर साहसपूर्वक अग्रसर होता है।

विघ्न-बाधाओं से वह डरता नहीं है, कभी उत्तेजित या उद्विग्न नहीं होता, कभी निराश या हताश नहीं होता; तेज, बल, उत्साह और साहस से सदा पूर्ण होता है तथा निष्ठा और उत्साह उसमें कभी क्षीण नहीं होते।

विचार चारित्र्य-निर्माण की ईंटें हैं। चारित्र्य जन्मतः आने वाली वस्तु नहीं है, इसका अर्जन किया जाता है। इस जीवन में शुद्ध चारित्र्य-निर्माण करने का दृढ़ संकल्प करने की आवश्यकता है; फिर उस संकल्प की पूर्ति के लिए निश्चित पुरुषार्थ निरन्तर करते जाना चाहिए।

अपना चारित्र्य स्वयं बनाओ। आप अपने जीवन को आकार दे सकते हो। चारित्र्य ही बल है, प्रभाव है। उसी से मित्र बनते हैं; उससे यथेष्ट सहारा और समर्थन मिलता है। धन, जन सब उसके लिए सुलभ हैं। सम्पत्ति, सम्मान, सफलता और सुख का सहज तथा सुलभ मार्ग उससे ही उद्घाटित होता है।

जय-पराजय में, सफलता-विफलता में और जीवन के प्रत्येक विषय में निर्णायक तत्त्व यदि कोई है तो वह चारित्र्य है। शुद्ध चारित्र्यवान् इहलोक तथा परलोक में भी अतीव सुख भोगता है।

आप अपने जीवन में परस्पर के व्यवहार में जो सहज भाव से छोटा-छोटा काम करते हैं, अल्प-सी सज्जनता बरतते हैं, थोड़ी सहानुभूति जताते हैं, सौहार्द प्रकट करते हैं, तो यही आपके चारित्र्य में चार चाँद लगा देते हैं। इतना तो बड़े-बड़े व्याख्यानों से, प्रवचनों से, वक्तृता से और पाण्डित्य-प्रदर्शन से भी नहीं होगा।

श्रेष्ठ चारित्र्य का निर्माण उत्तम और शक्तिशाली चिन्तन से होता है। सच्चारित्र्य निजी पुरुषार्थ का ही परिणाम है; व्यक्ति के अपने प्रयास और उद्यम का ही प्रतिफल है।

आज विश्व का संचालन सम्पत्ति या सत्ता नहीं करती और न ही बुद्धि-शक्ति करती है। नैतिक चारित्र्य ही नैतिक गुण से मिल कर निखिल ब्रह्माण्ड को चलाता है।

यदि चारित्र्य नहीं हो तो कुछ नहीं; नाम, धाम, यश, कीर्ति, धन, विजय सब तिनके के समान हैं। प्रत्येक के पीछे चारित्र्य का पृष्ठबल चाहिए और वह चारित्र्य आपके अपने विचारों से बनता है।

३. विचार और शब्द

हमारी वाणी के प्रत्येक शब्द में शक्ति है। शब्दों की दो प्रकार की वृत्तियाँ होती हैं—शक्ति-वृत्ति और लक्षणा-वृत्ति।

उपनिषदों में लक्षणा-वृत्ति अपनायी गयी है। **'वेदस्वरूपोऽहम्'** का यह अर्थ नहीं कि मेरा स्वरूप वेद है; लक्षणा-वृत्ति सूचित करती है कि उसका अर्थ 'ब्रह्म' है जो एकमात्र उपनिषदों के अध्ययन से ही जाना जाता तथा मात्र शब्द-प्रमाण से समझा जाता है।

शब्दों की शक्ति पर ध्यान दीजिए। कोई किसी को 'साला', 'बदमाश' या 'बेवकूफ' कहे तो उसका क्रोध तुरन्त भड़क उठेगा और झगड़ा हो जायेगा। किसी को आप 'भगवन्' कहिए, 'प्रभु' या 'महाराज' कहिए तो वह अत्यन्त प्रसन्न हो जायेगा।

४. विचार और कृति

विचार ही सभी कृतियों के प्रसुप्त बीज हैं। मन की कृति वास्तविक कृति है, शारीरिक कृति नहीं। जो मानसिक कर्म हैं, उन्हीं को 'कर्म' कहा गया है।

विचार और कृति अन्योन्याश्रित हैं। ऐसा कोई मन नहीं होता जिसमें विचार न हों। मन तो विचारों से निर्मित है।

जो विचार अन्दर अगोचर थे, उनकी ही बाह्य अभिव्यक्ति का नाम वाणी है। कृति का मूल कारण राग-द्वेष है। इस राग-द्वेष के पीछे यह तथ्य निहित है कि आप विषयों में सुख या दुःख मानते हैं। विचार तो नाशवान् है। काल-बाधित प्रक्रियाओं को भी अभिव्यक्त करने का सामर्थ्य उसमें नहीं है, फिर उस परम सत्ता का जो वाङ्-मनस अगोचर है, कैसे व्यक्त कर सकेगा? इन्द्रियों और अंगोपांगों सहित यह शरीर मन के अतिरिक्त कुछ नहीं है।

५. विचार, शान्ति और शक्ति

कामनाएँ जितनी कम होंगी, विचार उतने अल्प होंगे। पूर्णतया कामना-रहित हो जाओ, निष्काम बन जाओ। मन का चक्र सर्वथा रुक जायेगा। यदि आवश्यकताएँ घटाओ, कामनाओं की पूर्ति के पीछे न लगो, एक-एक करके कामनाएँ समाप्त करते जाओ तो आपके विचार छोटे होते जायेंगे, घटते जायेंगे।

सदा स्मरण रखो कि विचार जितने कम होंगे, शान्ति उतनी अधिक होगी।

एक धनी व्यक्ति बड़े नगर में सट्टे का काम करता रहता है, उसके मन में असंख्य विचार भरे हैं, इसलिए उस सारे वैभव के होते हुए भी वह नितान्त अशान्त है। क्षण-भर भी उसे शान्ति नहीं है। इसके विपरीत एक साधु हिमालय की कन्दराओं में पड़ा हुआ है और विचार-नियमन का अभ्यास कर रहा है। वह अपनी दरिद्रता तथा अभावों के होते हुए भी अत्यन्त सुखी है।

विचार जितने अल्प होंगे, मनोबल और अवधान उतना ही अधिक होगा। मान लीजिए, आपके मन में एक घण्टे के अन्दर औसतन सौ विचार घूमते हैं और सतत धारणा तथा ध्यान की साधना से यदि आप उस संख्या को घटा कर नब्बे पर लाते हैं तो आपने निश्चित ही दश प्रतिशत विचार-नियमन साध लिया, मन की एकाग्रता सिद्ध कर ली।

इस प्रकार घटने वाला प्रत्येक विचार मानसिक शान्ति और शक्ति में वृद्धि कर जाता है। एक भी विचार घटता है तो पर्याप्त शान्ति और शक्ति बढ़ती है। चूँकि आपके अन्दर सूक्ष्म बुद्धि नहीं है, इसलिए इस अन्तर को आप प्रारम्भ में पहचान नहीं सकेंगे, किन्तु अन्दर एक आध्यात्मिक तापमापक-यन्त्र (थर्मामीटर) है जो सूक्ष्म-से-सूक्ष्म अन्तर को भी ग्रहण कर लेता है; एक भी विचार घटे तो वह अंकित कर लेता है। एक विचार आप घटाते हैं तो उससे दूसरा विचार सरलतापूर्वक घटाने की आपमें मानसिक शक्ति आ जाती है।

६. विचार-शक्ति और पवित्र विचार

विचार प्राणी की शक्ति या ईथर से सूक्ष्मतर अभिव्यक्ति है। आप विचार करते हैं, इसका कारण यह है कि विश्वव्यापक विचार में आपका भी भाग है।

विचार शक्तिऔर गति दोनों है। विचार गतिशील है। विचार चलता है। विचार भविष्य निर्धारित करता है। जैसा विचार करें, वैसा बनें। विचार ही है जो मनुष्य को सन्त या पापी बनाता है। विचार मनुष्य को चाहे जो बना सकता है। आप सोचें कि आप ब्रह्म हैं, आप ब्रह्म बन जायेंगे।

पवित्र विचार दिव्य विचारों का निर्माण करते हैं और उन्हें स्थिर रखते हैं। घृणापूर्ण विचार हृदय के सामंजस्य में हस्तक्षेप करते हैं। प्रत्येक अनुपयोगी विचार

शक्ति-क्षयकारी है, आध्यात्मिक उन्नति में बाधक है; इसलिए प्रत्येक विचार का अपना सुनिश्चित उद्देश्य होना चाहिए।

असत् और पापपूर्ण विचारों से भय जीता नहीं जा सकता। क्रोध और उद्वेग को धैर्य मिटा सकता है। प्रेम द्वेष को जीत सकता है। पवित्रता वासना को मिटा सकती है। मन का निर्माण प्रतिदिन नहीं होता, वह तो प्रतिक्षण ही अपना रूप और रंग बदलता रहता है।

७. बन्धनकारक विचार

मन अपनी भेद-भाव की शक्ति से यह सारा जगत् बनाता है। जब ऐन्द्रिय विषयों की ओर मानसिक विचारों का विस्तार होता है तब वह बन्धनकारक होता है।

विचारों का त्याग ही मुक्ति है। मन ही शरीर और इन्द्रिय-विषयों में आसक्ति पैदा करता है और इसी आसक्ति से मनुष्य को बन्धन में डालता है। आसक्ति का कारण रजोगुण है।

सत्त्वगुण आसक्ति का नाश करता और विवेक तथा वैराग्य उपजाता है। राजसिक मन के कारण अहंभाव और ममभाव पैदा होता है तथा शरीर, जाति, धर्म, वर्ण, जीवनक्रम आदि-आदि भेद निर्माण होता है।

बहुविध प्रापंचिक सुखों की भूमि में मन की वृत्तियाँ-रूपी बीज पनपते हैं जिनके कारण मायागत भ्रम का विषवृक्ष अधिकाधिक फैलता जाता है।

८. शुद्ध विचारों से परा-अनुभूति

विचार दो प्रकार के हैं : शुद्ध और अशुद्ध। सत्कार्य के प्रति आकर्षण, जप, ध्यान, धार्मिक ग्रन्थों का अध्ययन आदि शुद्ध विचार हैं; सिनेमा देखने की इच्छा, दूसरों को दुःख देना, विषय-वासना की पूर्ति खोजना आदि अशुद्ध विचार हैं।

अशुद्ध विचारों को शुद्ध विचारों के प्रोत्साहन द्वारा मिटाना चाहिए और अन्त में शुद्ध विचारों को भी छोड़ देना चाहिए।

वैषयिक सुख की पुनरावृत्ति से विचार बलवान् होते हैं। विषय-सुख का सूक्ष्म संस्कार मन पर अंकित हो जाता है।

मन का वास्तविक स्वरूप केवल सत्त्व है। रजस् और तमस् तो बीच में संयोगवशात् सत्त्व से आ मिलते हैं। साधना से अथवा तपस्या, निष्काम सेवा, दम, शम, जप, उपासना आदि शुद्धिकरण की क्रियाओं द्वारा उनको मिटाया जा सकता है। दैवी सम्पत्ति के विकास से रज-तमोगुण दूर हो जायेंगे। तब चित्त शुद्ध, सूक्ष्म, स्थिर तथा एकाग्र हो जायेगा और फिर अखण्डैकरस ब्रह्म में लीन हो जायेगा। जैसे जल जल में मिल जाता है, दूध दूध में मिल जाता है, तेल तेल में मिल जाता है, वैसे ही चित्त ब्रह्म में मिल जाता है और तत्परिणाम-स्वरूप निर्विकल्प समाधि प्राप्त होती है।

९. विचार-मुक्ति के लिए राजयौगिक पद्धति

कुविचारों के स्थान में सुविचार स्थापित कीजिए। प्रतिस्थापन की इस पद्धति से कुविचार नष्ट हो जायेंगे। यह बहुत सरल है। यह राजयोग की पद्धति है।

आत्म-शक्ति या संकल्प-शक्ति से एकदम कुविचार को मिटा देना, कह देना कि 'हे पापी विचार, निकल जा', बड़ा दुस्साध्य है। यह सामान्य लोगों के लिए उपयुक्त नहीं है। उसके लिए बहुत बड़ी संकल्प-शक्ति तथा आत्म-बल की आवश्यकता होती है।

पहले शुद्ध विचारों की अवस्था से ऊपर उठना चाहिए और अन्त में निर्विचार की उच्च अवस्था में पहुँचना चाहिए, तभी आप अपने निज-स्वरूप में स्थित हो सकते हैं। तब करतलामलकवत् ब्रह्म-साक्षात्कार होगा।

१०. विचार-मुक्ति के लिए वेदान्तिक प्रविधि

जब व्यर्थ विचार और भावनाएँ आपको अधिक सन्तप्त करने लगें तब आप उनके प्रति उदासीन हो जाइए। अपने से कहिए, 'मैं कौन हूँ?' यह अनुभव कीजिए कि 'मैं मन नहीं हूँ, मैं आत्मा हूँ, सर्वव्यापी आत्मा हूँ, शुद्ध सच्चिदानन्द हूँ। यह भावनाएँ मुझे कैसे प्रभावित कर सकती हैं? मैं निर्लिप्त हूँ, अनासक्त हूँ, मैं इन सब वृत्तियों का साक्षी हूँ। मेरा कोई कुछ बिगाड़ नहीं सकता।' जब आप इन वेदान्तिक विचारों का पुनः-पुनः उच्चारण करेंगे, सारे विचार और सारी भावनाएँ स्वयमेव विनष्ट हो जायेंगी।

विचारों और भावनाओं को निष्कासित करने तथा मन से लड़ने की यह ज्ञान-प्रक्रिया है। जब भी मन में कोई विचार उठे तो निरीक्षण करके देखें कि वृत्ति क्यों

उठी? किससे इसका सम्बन्ध है? मैं कौन हूँ? अन्त में सभी विचार स्वयं समाप्त हो जायेंगे। मन की सारी क्रियाएँ बन्द हो जायेंगी। मन अन्तर्मुखी हो जायेगा, आत्मा में स्थिर हो जायेगा। यह वेदान्तिक साधना है। आपको अध्यवसायपूर्वक साधना में सतत लगे रहना चाहिए।

जितने भी व्यर्थ विचार उठें, उन सभी सांसारिक विचारों को मिटा देने की शक्ति केवल इस एक विचार में है कि 'मैं कौन हूँ?' अन्य विचार स्वयं मिट जायेंगे तथा अहंभाव नष्ट हो जायेगा। जो शेष बचा रहता है वह केवल अस्ति है; चिन्मात्र है, केवल शुद्ध चैतन्य है; नाम-रूप-रहित चिदाकाश मात्र है; व्यवहार-रहित, मल-वासना-रहित, निष्क्रिय, निरवयव तत्त्व है जिसे माण्डूक्योपनिषद् 'शान्त, शिव, अद्वैत' कहती है। वह आत्मा है। वही जानना है, ज्ञेय है।

दशम अध्याय

विचार-शक्ति का शास्त्रीय ज्ञान

विचार-शक्ति और व्यावहारिक आदर्शवाद—१

मनुष्य प्रायः जीवन में हीन से हीनतर स्थिति पर ही पहुँचता है; क्योंकि वह किसी समुचित काम में अपनी सारी शक्ति लगाता नहीं, इसलिए उसे ज्ञान का परिपूर्ण प्रतिफल नहीं मिलता। अपूर्णताओं में ही वह लेटता रहता है, कष्ट भोगता रहता है। चूँकि उसकी जीवनधारा शक्ति के साथ प्रवाहित नहीं होती, इसलिए उसमें ईर्ष्या-द्वेष की सड़ाँध पैदा होती रहती है। 'मैं' की वृत्ति सदा ही औरों को दोषी ठहराने को ही तैयार रहती है। वैषयिक संसार के समस्त विषय उसके लिए मधुर पीड़ा देने वाले हैं; फिर भी मनुष्य सुदृढ़ व्यक्तिगत भावनाओं के आधार पर खड़ा रहना चाहता है। निजी वासनाओं में जकड़े रहने के कारण वह दूसरों के साथ मेल-जोल का समुपयुक्त तथा मधुर सम्बन्ध स्थापित नहीं कर पाता। वह प्रत्येक परिस्थिति में अपने ही आनन्द की खोज में रहता है।

सत्य की वेदी तो मानसिक संकीर्णता, कठोरता, स्वार्थ, विषमता और अहंभाव का बलिदान माँगती है। हे मानव! तू अपने-आपको उस सत्य के लिए तैयार कर, जिसे पक्षपात मालूम नहीं है। लिंग-भेद मालूम नहीं है, जिसे अस्थिर क्षणिक आभा पसन्द नहीं है। मनुष्य के नित्य जीवन में भूलों का बड़ा कलंक लगा रहता है और यही कारण है कि उसका जीवन दूषित और सौन्दर्यहीन बनता है। मनुष्य अपने ही असद्विचारों के कारण एक-दूसरे के आँख की किरकिरी बने हुए हैं। उनकी अपनी असत्कामनाएँ बरफ बन कर उनके सीने को ठिठुराये दे रही हैं।

मनुष्य-मनुष्य के मध्य प्रत्येक प्रकार के सम्बन्ध हैं। सभी सम्बन्धों में वे परस्पर बँधे हुए हैं—रक्त से, गर्व से, भय से, आशा से, आर्थिक लाभ से, वासना से, घृणा से, प्रशंसा से अर्थात् हरेक परिस्थिति से सम्बन्ध है, केवल एक आध्यात्मिक प्रेम से ही नहीं है। इसका एकमात्र कारण है गलत विचार।

बुद्धिमान् मनुष्य अपने लिए एक द्वीप बना लेता है, जिस पर कभी बाढ़ का प्रकोप नहीं हो सकता। पुष्प की सुगन्ध वायु के विपरीत जा नहीं सकती, किन्तु ज्ञानी

पुरुष की सुरभि वायु के विपरीत भी जा सकती है। वह अपने विचारों से सभी प्रदेशों में व्याप्त हो जाता है। वह तो हिमाच्छादित गिरि-शिखर के समान है जो दूर-दूर से देखा जा सकता है।

हे मानव! अपने दीपक पानी से भरोगे, तो अँधेरा दूर नहीं कर सकोगे। उसमें सद्विचार-रूपी तेल भरो, सम्यक् विचार-रूपी प्रकाश आपके मार्ग को आलोकित करेगा। अपनी अभिलाषाओं की सम्पूर्ति में और अहंकार की तुष्टि में न लगो।

मनुष्य सत्य के तट पर बुरी तरह मर रहा है। प्रत्येक असद्विचार का अपना बीभत्स रूप होता है; किन्तु इसमें निराशा की कोई बात नहीं है, क्योंकि कोई अन्धकार ऐसा नहीं है जिसको मिटाने वाला कोई प्रकाश न हो। मनुष्य की प्रत्येक आकांक्षा का एक-न-एक उत्कृष्ट उत्तर है ही। जो विश्वास करते हैं कि सब सम्भव है, उनके लिए कुछ भी असम्भव नहीं है।

हे मानव! ठीक दिशा की ओर दृष्टि रखो और ठीक विधि का उपयोग करो। सद्विचारों की ओर प्रवृत्त रहो।

अपने लक्ष्य का ध्यान रखो। साहसिक यात्रा में पथभ्रष्ट हो जाना बहुत सरल है।

पवित्र विचार एक वाणी है। जब मुँह बन्द होता है तब वह बोलती है। वह बहुत प्रयत्न करती है और समस्त बाधाओं के होते हुए भी वह शान्ति से प्रकट होती है। उसे रोकने की शक्ति इस संसार में किसी में नहीं है। अधिक समय तक उसे कोई दबा कर नहीं रख सकता है। मनुष्य! असत्य का व्यापार मत किया करो।

सहस्रों मार्गों से सुख प्राप्त करने का प्रयत्न न करो। जितना शीघ्र आप उनके पीछे भागोगे, उससे भी अधिक शीघ्रता से वे आगे भाग जायेंगे। आप अपने तथा औरों के मार्ग में काँटा मत बनो।

अपने विचारों की दिशा बदल दो। विचारों का विश्लेषण करो। जहाँ आवश्यकता समाप्त होती है, वहाँ कुतूहल प्रारम्भ होता है। ज्यों-ही आपको सारी आवश्यकताएँ उपलब्ध हो जाती हैं, त्यों-ही आप बैठ कर कृत्रिम आकांक्षाओं के विचारों को प्रश्रय देना आरम्भ कर देते हैं। यही कारण है कि आपने नैसर्गिक नियम का अतिक्रमण कर दिया है।

अपने विचारों के कारण आप अपना संसार बना भी सकते हो, बिगाड़ भी सकते हो। प्रतिक्रिया का नियम इतना अपरिहार्य है। हे मानव! आप अपने हृदय के अन्तस्तल

में जिस प्रकार के विचारों को प्रश्रय दोगे, आपका बाह्य जीवन उसी रूप का बनेगा। बाहर से ऐसा प्रतीत होता है कि सच्चाई के पीछे संयोग है, परन्तु गहराई में विचार-शक्ति अपना कार्य करती रहती है। इस संसार में तथा नित्य जीवन में कोई भी काम संयोगवश नहीं होता; इसलिए अपनी विचार-शक्ति का विकास करो।

वास्तविक क्रिया तो मौन के क्षणों में होती है। शुद्ध विचार जीवन के सम्पूर्ण स्वरूप का नव-निर्माण करता है। वह मनुष्य से चुपचाप कहता है—"तुमने यह कर दिया, लेकिन ऐसा न करके किसी दूसरे प्रकार से करते तो अच्छा होता।"

मनन के समय मौन चिन्तन में जो विचार आप किया करते हो, उसे नित्य कर्म के समय अनसुना न कर दो। सदा उत्तम विचारों से सन्नध रहो, सजग रहो।

अपने निजी विचार और अपनी अनुभूति के अतिरिक्त सत्य-ज्ञान प्राप्त करने का अन्य कोई अपरोक्ष साधन नहीं है। ईश्वरीय विचार कालमान को घटा देता है, शताब्दियों को क्षण में बदल देता है, सभी युगों को वर्तमान में उपस्थित कर देता है। सर्वदा दिव्य उदात्त विचार ही किया करो।

२. विचार-शक्ति और व्यावहारिक आदर्शवाद—२

सद्विचारों की सहायता से असद्विचारों का प्रक्षालन करो और जब वह धुल जायें, तब दोनों का ही परित्याग कर दो। आज की आपकी अनुभूतियाँ अतीत काल के अगणित जीवनों के विचारों, अनुभवों और कृतियों के परिणाम हैं। दीर्घकालीन अभ्यास और विचार के बिना उससे सुगमता से छुटकारा नहीं मिल सकता।

विचार कृति के पूर्वज हैं। अपनी कृति का परिष्कार करना चाहो तो अपने विचारों का परिष्कार करो।

स्वावलम्बन और स्वप्रयत्न में अटल विश्वास रखो। विचार-बल से आप अपना भाग्य निर्धारित कर सकते हो। जिस प्रकार वर्षा का एकमात्र स्रोत मेघ है, उसी प्रकार शाश्वत समृद्धि का एकमात्र स्रोत विचार-नियमन है। आप ही अपने मित्र हो, आप ही अपने शत्रु हो। यदि सद्विचारों के प्रश्रय द्वारा आप स्वयं अपनी रक्षा नहीं करते, तो अन्य कोई भी उपाय नहीं है।

एकमात्र मन ही विधाता है। सब-कुछ उस मन से ही बनता है। अपनी इच्छा के अनुसार चाहे जैसी सृष्टि कर लेने को वह पूर्ण स्वतन्त्र है। जब भी कहा जाता है कि मन

बाह्य विषयों का सृष्टिकर्ता है, तो समझना चाहिए कि यह वह मन है जो वैश्व मन कहलाता है और ईश्वर-सृष्टि का एक भाग है; और जब प्रेम, घृणा आदि मानसिक वृत्तियों से सम्बन्ध रखने वाले मन का उल्लेख करते हैं, तो समझना चाहिए कि यह व्यष्टि मन है जो व्यक्ति-व्यक्ति में निहित और जीव-सृष्टि का एक भाग है।

हे मानव! वास्तविक ईश्वर तो आपके हृदय में बसता है और अपने शरीर-रूपी मन्दिर में स्थित उस ईश्वर की उपासना का एकमात्र मार्ग यही है कि अपने हृदय में आप उत्तम और सद्विचार ही किया करो। मन की वृत्तियों का निरोध करो और केवल श्रेष्ठ विचारों को ही महत्त्व दो।

आपके चतुर्दिक् जो भी वस्तु है, उसका स्वरूप वही है जैसा आप उसके विषय में सोचते हो। आपका जीवन वही है, जो आप अपने विचारों के द्वारा बनाते हो। अपने व्यक्तित्व का जो प्रासाद आपने खड़ा किया है, उसकी एक-एक ईंट आपका विचार ही तो है। विचार ही भाग्यविधाता है। आशा-पाश का सारा संसार आपके अपने विचारों का प्रतिबिम्ब है।

जैसा सोचोगे, वैसा ही अनुभव करोगे। आपकी अपनी कल्पनाएँ हैं जो आपका विनाश करती हैं। भय का विचार करते-करते आपने स्वयं ही अपने को डरपोक बना लिया; अतएव अपनी कल्पना के प्रति उदार न बनो।

प्रापंचिक विषयों के प्रति आपका जो विचार होगा, उस विचार का ही आप पर प्रभाव होता है। मन की दृष्टि में उसी बात का मूल्य अधिक है जिसके प्रति उसे दृढ़ श्रद्धा है। एक ही वस्तु को सभी देखते हैं, परन्तु प्रत्येक के मन में उसका मूल्य अलग-अलग है। अपने-अपने मन के झुकाव के अनुरूप प्रत्येक व्यक्ति सोचता है।

विचार निर्माण का साधन है। मनुष्य का निर्माण उसके विचारों के अनुरूप होता है। चारित्र्य भी विचार से निर्मित होता है। आपने पहले जो विचार किया होगा, उसी के अनुरूप आपका जन्म हुआ है और आज आपका जो चारित्र्य है, वह उन गत विचारों का परिशेष है। आज के अपने विचारों से आप अपना भविष्य बना रहे हो। यदि आप उत्तम विचार करोगे तो उत्तम बनोगे, सदाचारी बनोगे। हीन विचार करोगे तो कोई भी परिस्थिति आपका अन्यथा निर्माण नहीं कर सकेगी।

इस प्रकार विचार और कृति अन्योन्याश्रित हैं। सजग रहो। मानसिक क्षेत्र में सद्विचारों का ही प्रवेश होने दो।

प्रत्येक मनुष्य की अपनी-अपनी मान्यताएँ होती हैं और उन मान्यताओं के आधार पर कर्तव्य, धर्म, मूल्य, सुख, मुक्ति आदि प्रत्येक बात का अर्थ भी भिन्न-भिन्न होता है; इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को अपने आदर्श के अनुसार ही प्रयत्न करना चाहिए।

जो विचार और जो विश्वास आपमें दीर्घ काल से और गहरा घर कर गया है उसी के अनुरूप आप काम करते हैं। अपनी इच्छा के अनुसार आप प्रयत्न करेंगे और वैसा ही फल प्राप्त करेंगे। अपने मन को स्थूल विचारों से भर कर जड़ न बना दीजिए, सद्गुणों से उसे सूक्ष्म और सम्पन्न बनाइए।

वर्तमान जीवन के तीन पहलू हैं : भौतिक, मानसिक और आध्यात्मिक। भौतिक पहलू से आप जोरों से आबद्ध हैं; किन्तु भौतिक संवेदनाओं से और शारीरिक कामनाओं से आप सर्वथा ऊँचे उठें। इसके लिए यह विचार दृढ़ कर लें कि 'मैं शरीर नहीं हूँ, यह देह एक मन्दिर है जहाँ कुछ थोड़े समय के लिए रहना है।' मनःचांचल्य से ऊपर उठिए। विचार-जगत् में व्यक्ति-निष्ठा काम करती है।

अपने चित्त से भूत मात्र के प्रति सद्भावना और सद्विचारों का सतत प्रवाह प्रसारित कीजिए। प्रत्येक विचार के पीछे मैत्री और सेवा की उत्कट भावना का बल रहे।

आप काफी चालाक, चतुर और कुशल हो सकते हैं, किन्तु आपके सभी चातुर्यपूर्ण विचार और बुद्धिमत्ताओं पर पानी फेर सकने वाली भी एक शक्ति है; इसलिए गोमुख-व्याघ्र बनने का प्रयास न कीजिए। यह शक्ति, यह नियम प्रत्येक को विवश करता है कि वह जैसा है वैसा ही प्रकट हो। उसके विचार उसके चारित्र्य से प्रकट होते हैं, वाणी से नहीं। बनावटी व्यक्तित्व धारण करने का प्रयास न कीजिए, निश्छल और शुद्ध विचार अपनाइए।

विचार-प्रवाह दोनों दिशाओं से बहता है। जब वह सुख की ओर बहने लगता है तब मुक्ति और ज्ञान का साधन बनता है और जब वह अस्तित्व के भँवर की ओर तथा अविवेक की ओर निम्नगामी होता है तो अशुभ का कारण बनता है। जब चिन्तन नैतिक नियमों के अनुरूप काम करने लगता है, तब आलोक के शिखरों पर जा पहुँचता है।

व्यक्तिगत चिन्तन, व्यक्तिगत भावना और व्यक्तिगत संकल्प के आप केन्द्र-बिन्दु हैं। देश और काल का इन्द्रजाल आपके सम्मुख अलौकिक सुन्दर दृश्य उपस्थित करता है जो दृष्टि-भ्रान्ति की तरह पल-भर में अदृश्य हो जाने वाला है। आप

बार-बार उससे विडम्बित होते रहते हैं; यही कारण है कि आपका वक्षस्थल आहों से विदीर्ण होता है और आपकी विवेक-शक्ति ज्ञानाग्नि से शुष्क हो चली है। आपके सम्मुख आध्यात्मिक ध्येय प्रस्तुत है। उसकी ओर आप शीघ्र बढ़ते हैं या धीरे-धीरे, यह आपके विचार पर निर्भर करता है।

अपने उच्च विचारों से संलग्न रहिए। कई विफलताओं के मूल्य पर आप अपना ध्येय अवश्य प्राप्त करेंगे। निजी स्वार्थ और निजी मान-सम्मान के भूखे न बनिए। यदि दुष्ट विचारों का पाश आप अपने गले में नहीं लगा लेते हैं तो मृत्यु आपके निकट सहज आने वाली नहीं है।

मानसिक संस्कार से जो आनन्द प्राप्त होता है, उसकी तुलना में तीनों लोकों का वैभव, सभी प्रकार के रत्न और उच्चतम पद भी अत्यन्त तुच्छ हैं।

आपका मन सर्वसमर्थ है। वह सब-कुछ कर सकता है। अपने मन में आप जैसा विचार करेंगे, बाहर वैसा ही घटित होता है। मन में जिस बात पर अत्यन्त उत्कटता से विचार करते हो, बिलकुल वही साकार होता है, वही फलित होता है।

आपके विचार में निर्माण करने की शक्ति भरी है। वह अपने में ही पदार्थों का निर्माण कर सकता है। वही एकमात्र निर्माता है। मन को छोड़ कर कोई नहीं जो निर्माण या पुनर्निर्माण कर सके। विचार वह सामग्री है जिससे पदार्थों की उत्पत्ति होती है। चैतन्य का भौतिक रूप ही यह भूतसृष्टि है।

चूँकि सब-कुछ आपके विचारों का ही परिणाम है, इसलिए आपको जो-कुछ प्राप्त होता है उसके लिए दूसरा कोई उत्तरदायी नहीं है। जीवन में आप जो-कुछ पायेंगे, उसका मूल कारण आपके ही अन्दर है। जब तक आपके अन्दर पात्रता नहीं है, तब तक कोई दूसरा व्यक्ति आपको कुछ भी नहीं दे सकता। दूसरों से जो-कुछ भी मिलता है, वह वस्तुतः आपके अपने ही विचारों और प्रयत्नों का फल है। जब आपके विचार सही दिशा में प्रवाहित हो रहे हों, तब संसार में ऐसा कोई पदार्थ नहीं जिसे आप प्राप्त न कर सकें। न आपको निराशावादी बनना चाहिए, न लोकशत्रु।

निर्माण-शक्ति प्रत्येक मन का विशेष गुण है। अपनी प्रेरणा से आप जो प्रयास किया करते हैं, वही आपके भाग्य का ताना-बाना है। दुर्बल विचार करते हुए आप दुर्बल चित्त न बनिए। जो मन उथला है, बाहर-बाहर ही रह जाने वाला है, वह कभी अन्तर्दृष्टि की गहराइयों में नहीं जा पायेगा। विचार की एक ही धारा को दृढ़ कीजिए

और मन की भटकन को रोकिए। उत्कटता के साथ आप जो भी विचार करेंगे वह आपको अवश्य मिलेगा। देर-सबेर से, यह आपके तदर्थ प्रयत्न पर निर्भर करेगा।

प्रदेश की विशालता और काल की दीर्घता दोनों आपके विचारों और भावनाओं के सापेक्ष हैं। आप जैसा सोचेंगे, वैसा ही अनुभव करेंगे। एक क्षण को ही आप जैसा सोचेंगे, वैसा ही अनुभव करेंगे। एक क्षण को ही आप सुदीर्घ सोच लें तो वह बहुत ही दीर्घ काल बन जायेगा और उसके विपरीत वर्षों का काल क्षणवत् बीत जायेगा। एक ही अवधि यदि आप दुःख में हैं तो बहुत लम्बी प्रतीत होगी और सुख में हैं तो क्षणवत् प्रतीत होगी।

विचार की ऐसी अद्भुत शक्ति है कि दृढ़ विचारों से मीठा कड़ुवा बन सकता है और कड़ुवा मीठा बन सकता है। आप विष को अमृत बना सकते हैं। मीरा को देखिए, उसने अपने उत्कट विचारों के बल पर विष को अमृत में बदल दिया।

आपके चारों ओर विरोधों का जाल फैला हुआ है; परन्तु यदि आपके मन में विरोधी विचार नहीं हैं, तो फिर आप अभिशाप को सरलता से आशीर्वाद के रूप में वापस कर सकते हैं। इस प्रकार सभी विरोधी शक्तियों पर आप विजय प्राप्त कर सकते हैं। कड़ा संघर्ष कीजिए और मन की अवांछित सभी दौड़-धूप नियन्त्रित कीजिए।

आपके चतुर्दिक् का सारा संसार वैसा ही है, जैसी आप उसकी अपेक्षा रखते हैं। आप जो भी मन अथवा इन्द्रियों से ग्रहण करते हैं, उन सब पर आपके ही विचारों का रंग चढ़ा होता है। आपका मन समस्त विषयों को उसी रूप में ग्रहण करता है और आगे भी करता रहेगा, जिस रूप में आप पूर्ण श्रद्धा के साथ उसकी कल्पना करते हैं। समस्त पक्षपातपूर्ण विचारों के लौह-कवच को विदीर्ण कीजिए और वस्तु-मात्र में ईश्वरीय रूप का दर्शन कीजिए।

विचार ही वह मूल कारण है जिससे आप भ्रान्त होते हैं, जन्म-मृत्यु का अनुभव करते हैं, संसार के बन्धन में ग्रसित होते तथा उसी प्रकार उससे मुक्त भी हो सकते हैं।

स्वर्ग में आप जो सुख तथा नरक में जो कष्ट भोगते हैं, वह सब आपके ही विचारों का परिणाम है। शीघ्र या विलम्ब से, इस जीवन में या आगामी जीवनों में आपका प्रत्येक गतिशील विचार फलित हो कर रहने वाला है; इसलिए ठीक से विवेक कीजिए।

आपका आज का जीवन आपके पूर्व-विचारों से संकल्पित था; इसलिए आप अपने निजी विचारों के बल पर आज की स्थिति को दूसरी स्थिति में रूपान्तरित कर सकते हैं, यदि आप सोच लें कि आप ब्रह्म से भिन्न हैं, तो आप भिन्न हैं। यदि आप सोच लें कि आप ब्रह्म हैं, तो आप ब्रह्म ही हैं। आप अपने विचारों से अपनी सीमा निर्धारित करते हैं।

आपका चित्त आपके प्रत्येक दिव्य विचार के द्वारा इस दृश्य ससीम सृष्टि के एक-एक सूक्ष्म आवरण को हटाता जाता है, क्षीण करता जाता है और उस अनन्त शाश्वत तत्त्व से एकरूप होता जाता है, किन्तु आप अपनी इस मनःसृष्टि को अत्यन्त दुर्लक्ष्य कर रहे हैं।

३. विचार-शक्ति और व्यावहारिक आदर्शवाद—३

आपके विचार में आपके भाग्य की रूप-रेखा अंकित है। जितनी आपकी कल्पना-शक्ति होगी, उतनी ही आपकी अन्तः-शक्ति होगी। आपके इच्छानुसार ही आपका जगत् होता है।

आप शक्ति और आनन्द के अनन्त सागर में जी रहे हैं, परन्तु आप अपने विचार, श्रद्धा और कल्पना की मात्रा के अनुरूप ही उससे प्राप्त करेंगे। आपकी अपनी कुछ आकांक्षाएँ होती हैं और उन्हीं के अनुरूप आप विचार करते हैं और उन्हीं विचारों को मन में प्रश्रय देते हैं, परन्तु विवेकपूर्वक कार्य करें तो मन की हवाई किले बनाने की प्रवृत्ति सरलता से दूर कर सकते हैं।

आपके विचारों की सीमा ही आपकी सम्भावनाओं की सीमा है। आपकी परिस्थिति तथा आपका वातावरण आपके विचारों का ही मूर्त रूप है। संसार के आपके अनुभव भी आपके विचारों के अनुरूप ही उन्नत अथवा अवनत होते हैं। इस संसार में आप जो भी विचार करेंगे, अन्ततः वह ही फलित होगा।

शुद्ध मन दृढ़ता से जो सोचता है, वह होता ही है। विचारों में शक्ति उसी अनुपात में होती है जितनी निष्ठा, लगन, गहराई और उत्कटता हो। ये सारे गुण तब आते हैं जब उसी विचार का बारम्बार सतत चिन्तन करते हैं। जिस विचार का सतत चिन्तन करते हैं, निरन्तर उसी की कल्पना एवं इच्छा करते हैं, तो ये सब उस विचार के सफल होने में विशेष सहायक होते हैं।

चित्त को शुद्ध कर लीजिए, जिस विषय या लोक की आप कामना करेंगे वही विषय और वही लोक आपको प्राप्त होगा।

यह सच है कि आप जो भी विचार करते हैं, उसका परिणाम समस्त मानव-शरीर-रचना पर अथवा उसके किसी भाग पर अवश्य होता है। निरन्तर ध्यान करते रहने से यह स्थूल शरीर सूक्ष्म बन सकता है और जो सूक्ष्म मनोमय शरीर है, वह स्थूल बन सकता है। सफलता का रहस्य है बारम्बार प्रयत्न करते रहना।

दृढ़ निश्चय की शक्ति विकसित कीजिए। विचारों के फलीभूत होने में यह एक महत्त्वपूर्ण कारण है। आपके दृढ़ निश्चय को अन्यथा करने में इस संसार में कोई भी समर्थ नहीं है। आपको सब-कुछ प्राप्त होगा।

आपका शरीर आपके विचारों का ही मूर्त रूप है। विचार परिवर्तित होने से शरीर भी परिवर्तित हो जाता है। मन आपके विचारों द्वारा इस शरीर की रचना करता है। विचार में वह शक्ति है जो आज के मानव की रचना में परिवर्तन कर सकती है, स्थानान्तरण कर सकती है अथवा कम-से-कम सुधार तो कर ही सकती है।

शरीर में जब अव्यवस्था या असन्तुलन होता है तो उसे व्याधि कहते हैं और मन में जब अन्तर्विरोध उत्पन्न होता है तो उसे आधि करते हैं। दोनों के मूल में अज्ञान है और सत्य के ज्ञान से इन्हें सुधारा जा सकता है।

जब आप प्रापंचिक अनुभवों से दुःखी होते हैं तब आपके मन में इस अव्यवस्था के कारण शरीर का सहज और सरल प्राण-संस्थान बिगड़ जाता है। जब श्वास की गति अनियमित होती है तो नाड़ियाँ विकृत हो जाती हैं। कुछ में प्राण-शक्ति अधिक हो जाती है और कुछ में कम। इस प्रकार सारा ही संस्थान अव्यवस्थित हो जाता है। इस भाँति शारीरिक रोगों का मूल कारण मानसिक असन्तुलन है और इस मूल कारण के निवारण से सम्पूर्ण रोग दूर किये जा सकते हैं।

मस्तिष्क में प्रवेश करने वाले प्रत्येक हीन और दुष्ट विचार से शरीर-कोषों पर बुरा परिणाम होता है, जो आगे चल कर रोग का कारण बनता है। सभी असद्विचार रोग के सन्देशवाहक हैं, मृत्यु के अग्रदूत हैं।

यदि आप दीर्घायुष्य प्राप्त करना चाहते हैं और स्वस्थ एवं ज्ञानमय जीवन चाहते हैं तो सद्विचारों को अपनाइए। आपके शरीर को बनाने और पुनर्निर्माण करने में विचार अत्यन्त शक्तिशाली और सूक्ष्म प्रभाव रखते हैं। सावधान रहें।

वस्तुतः सभी रोगों तथा उनके जितने भी दुःख और कष्ट हैं, उनके मूल में मानसिक तथा भावात्मक विकृतियों का प्रभाव है। आपके लिए मानसिक सामंजस्य, समाधान और मेल अत्यन्त आवश्यक है। सत्कार्यों द्वारा अपने विचारों को शुद्ध कीजिए; इसके लिए सत्संग कीजिए। विचारों के शुद्ध होते ही प्राणवाहिनी नाड़ी ठीक से काम करने लगेगी और सारी शरीर-प्रणाली को शुद्ध कर देगी।

प्रत्येक सद्विचार हृदय को शक्ति प्रदान करता है, पाचन-प्रणाली को उद्दीप्त बनाता है और शरीर की प्रत्येक ग्रन्थि को सहज स्थिति में ला देता है।

मन के इस समाधान का दूसरा नाम है सन्तोष। जब आपका विचार इधर-उधर भटकना बन्द कर देगा, जब आप आत्म-सन्तोष का अनुभव करेंगे तब आप अवर्णनीय सुख प्राप्त करेंगे। यदि आप भीतर से प्रसन्न हैं तो सभी आपको आनन्दप्रद और सुहावना लगने लगेगा।

प्रसन्नता का प्रमुख स्रोत विचार ही है। अपने विचारों को शुद्ध कीजिए। सभी कष्ट दूर हो जायेंगे।

यदि आपके विचार शान्तिमय हैं तो सारा संसार शान्त दिखायी देगा। यदि आपके मन में असद्विचारों का ही साम्राज्य है तो सारा संसार आपको जलती भट्ठी की तरह दीखेगा। कोई परिस्थिति आपको असद्विचार बनाने के लिए विवश नहीं करती। भाग्य की भ्रान्त धारणा को ले कर अपने-आपको नष्ट न कीजिए। भाग्य का कोई स्वतन्त्र अस्तित्व है ही नहीं।

विचार में सत्य को प्रकट करने की क्षमता है। सही विचारों से पूर्ण ज्ञानी मनुष्य अनेक भयानक परिस्थितियों से बच सकता है। सत्य सदा सर्वत्र समग्र रूप से विराजमान है, जहाँ भी उसके दर्शन की उत्कट अभिलाषा होगी, तीव्र प्रयत्न होगा, वहाँ उसके दर्शन हो जायेंगे।

समस्त विषयों का सारतत्त्व, मूल स्वभाव वैचारिक है। भौतिक निष्ठा गलत धारणा है।

उष्णता से हिमखण्ड पिघल कर पानी बन जाता है, उसी प्रकार सम्यक् दृष्टि के अभ्यास से मन सूक्ष्म बन जाता है और सद्विचार जाग्रत हो जाता है।

वास्तविक क्रिया तो विचार ही है। वह वस्तुतः मानसिक ही है, भौतिक नहीं। भौतिक क्रिया तो मन की स्पन्दन-रूप आन्तरिक क्रिया का बाह्य आविर्भाव मात्र है। हमारे सम्पूर्ण शारीरिक कर्म उस मानसिक कर्म के ही विभिन्न अंग हैं।

वसन्त ऋतु में जिस प्रकार वृक्षों का सौन्दर्य निखर उठता है, उसी प्रकार जिस मात्रा में आपके सद्विचार विकसित होंगे उसी मात्रा में आपकी बुद्धि, शक्ति और कान्ति भी उज्ज्वल हो जायेगी। ज्ञानी के विचार सामान्य मनुष्य के विचारों से सर्वथा भिन्न होते हैं। संसार से ज्यों-ज्यों आप अलिप्त और अनासक्त होते जायेंगे, त्यों-त्यों आपका मुक्ति से सान्निध्य होता जायेगा।

जब आपके चारों ओर शुद्ध एवं पवित्र विचार फैलने लगेंगे, तब ईश्वरीय शाश्वत नियम भी आपकी सहायता करने लगेगा। आप जानते हैं कि आपके विचार कैसे हैं। आपको क्रमशः जो-जो अनुभव हुए हैं, वे स्वयं आपको ज्ञात हैं। प्रत्येक का प्रापंचिक अनुभव अलग-अलग है जो उसके लिए सर्वथा नया है। आपका मन सीमित है। वह अनेक वृत्तियों और परिस्थितियों का दास हो गया है।

४. कुछ विचार-बीज

आत्मज्ञान ही वास्तविक ज्ञान है। वह मनुष्य का अपने निज-स्वरूप का ज्ञान है। ज्ञान का अर्थ है—अपना और दूसरों का विशुद्ध भान, सही विवेक, समुचित मूल्यांकन और सूक्ष्म अवलोकन-क्षमता। सम्यक् कृति और सम्यक् जीवन सद्विचार का ही परिणाम है।

सौन्दर्य निश्चित रूप से आध्यात्मिक वस्तु है। वास्तविक सौन्दर्य तो चित्त में होता है। वह चारित्र्य में है। सौन्दर्य पवित्रता में है। सौन्दर्य सद्गुणों में उद्भासित होता है। प्रेम समस्त सृष्टि के साथ एकरूपता के विशुद्ध और आन्तरिक भान का नाम है। आत्म-त्याग और निःस्वार्थता ही प्रेम है।

प्रेम हार्दिक पवित्रता है। अबाध सद्भावना, निरपवाद दया, असीम करुणा और अपार सहिष्णुता ही प्रेम है। प्रेम में काम-वासना का अभाव है।

शरीर ही सब-कुछ नहीं है। महत्त्वपूर्ण वस्तु कुछ और है, जो इसी शरीर में है और वह है मनुष्य की आत्मा। यद्यपि वह विश्वात्मा का ही स्वरूप है, उसी का रूप है, फिर भी कर्मों के कारण जीवात्मा के रूप में उससे भिन्न दिखायी देता है। शरीर नष्ट हो जायेगा। आत्मा बनी रहेगी। जब तक शरीर है तब तक आत्मा का पार्थक्य भी बना

रहेगा। जब शरीर छूट जायेगा, तब उसे विश्वात्मा में, अपने निज-रूप में विलीन होना ही है; परन्तु यदि उसके प्रारब्ध-कर्म अवशेष हैं तो उन्हें पूरा भोगने के लिए उसे दूसरा शरीर धारण करना पड़ेगा।

सब-कुछ चला जाता है; शरीर जब गिर जाता है, तब उसके कर्मों के अतिरिक्त शेष सब उसे त्याग देते हैं। अतः मनुष्य जब तक जीवित है तब तक उसे सन्तोष से रहना चाहिए, प्रेम और सद्भावना के साथ जीना चाहिए, किसी को किसी प्रकार का दुःख तथा कष्ट नहीं देना चाहिए; सांसारिक वैभव के लिए लालायित नहीं होना चाहिए; करुणा, औदार्य, क्षमा एवं सहिष्णुता के साथ व्यवहार करना चाहिए; शारीरिक सुख-सुविधा में निर्लिप्त रह कर अपने कार्य के प्रति निरहंकार रहना चाहिए और जब तक प्रारब्ध-कर्म पूरा भोग नहीं लेते तब तक कोई नवीन कर्म न करने में सावधान रहना चाहिए।

थोड़ा-सा सन्तोष करना सीख लें, विवेक अपना लें, भगवान् के प्रति भक्ति रखें, उसकी इच्छा पर अपने को छोड़ दें, थोड़ी-सी निर्लिप्तता बरतें, किसी से कुछ अपेक्षा न रखें, सदा प्रार्थनामय वृत्ति रखें, अपने अन्तःकरण के आदेश के अनुसार चलें, आध्यात्मिक सिद्धान्तों पर पूर्ण श्रद्धा एवं सदाचार में निष्ठा रखें तो जीवन अपेक्षाकृत अत्यधिक सरल, सहज, सुखी और मूल्यवान् हो जायेगा।

यदि आपको कोई कष्ट है तो पहले उसका कारण ढूँढ़ें। वास्तविक कष्ट तो उस कारण की उपेक्षा करने में ही है। उन कारणों को दूर कर दें तो सारे कष्ट घट जायेंगे, भले इक्का-दुक्का कभी आ जायें। यह संसार बड़ा विद्यालय है जहाँ व्यक्ति को उत्तम व्यक्ति बनने का पर्याप्त अवसर मिलता है।

कोई जन्म से पूर्ण नहीं है। प्रगति और उन्नति करना प्रत्येक के लिए सम्भव एवं शक्य है। जो भी दुःख तथा कष्ट आते हैं, उनसे मनुष्य को अनुभव प्राप्त करना चाहिए और आज से उत्तम स्थिति पर पहुँचना चाहिए, ऐसा नहीं कि चिन्ता और व्यग्रता में फँस जायें। महान् और उत्कृष्ट विचारों का आश्रय लें और पूर्णता प्राप्त करें।

गुरु महाराज की निःशेष कृपा सर्वदा शिष्यों के लिए ही है। उसमें कोई प्रतिबन्ध नहीं है। यह तो शिष्य के इन्द्रिय-निग्रह, श्रद्धा, पवित्रता और तपस्या पर निर्भर है कि उस कृपा से वह लाभान्वित होता है अथवा नहीं। कुछ ही व्यक्तियों को इसका ज्ञान है कि शिष्यों के हृदय में गुरु का वास है। गुरु की शिष्य के हृदय में विद्यमानता उसका महान् सौभाग्य है।

एकादश अध्याय

विचार-शक्ति और ईश्वर-साक्षात्कार

१. जीवन तथा विचार पारस्परिक प्रतिक्रिया के परिणाम

आपके चित्त में जो विचार होगा, वही आपके जीवन में अभिव्यक्ति होगा। यदि आप पराक्रमी हैं, प्रसन्न हैं, करुणालु हैं, सहिष्णु और दयावान् हैं तो ये ही गुण आपके भौतिक जीवन में प्रकट होंगे। मन की यदि कोई अशुद्धि है तो वह है हीन विचार और तुच्छ अकांक्षा।

जिस प्रकार सजग प्रहरी कोषागार की रक्षा करता है, उसी प्रकार आप अपने सद्विचारों की रक्षा कीजिए। जब 'अहं' का विचार नहीं रहेगा, तब कोई विचार नहीं रहेगा।

जीवन तथा विचार पारस्परिक प्रतिक्रिया के परिणाम हैं। मन जब अपना काम बन्द कर देता है, तब फिर द्वैतभाव समाप्त हो जाता है। विचार तो काल के अधीन है। विचार बन्द होना चाहिए, तभी आप कालातीत अवस्था प्राप्त करेंगे। स्वस्थ और स्तब्ध रहें। निर्विचार बनें।

विचार की सभी तरंगों को समाप्त कीजिए। जब कि मन विगलित हो कर क्षीण हो जाता है, उस स्तब्धता में स्वयं-प्रकाश आत्मा, शुद्ध चैतन्य आत्मा प्रतिभासित होता है। मन का निरीक्षण कीजिए। विचारों का निरीक्षण कीजिए। शान्ति बनाये रखिए। अपने हृदय को परमेश्वर का योग्य अधिष्ठान बनाइए।

२. आध्यात्मिक अनुभूति के रूप में विचारों का परिणाम

पिघला हुआ सोना जिस साँचे में ढालिए, उसी साँचे का रूप ले लेता है। इसी प्रकार मन जिस वस्तु पर छा जाता है, उसी वस्तु का आकार ग्रहण कर लेता है।

जिस किसी भी वस्तु के सम्बन्ध में मन उत्कटता के साथ सोचने लगता है, वह उसी का रूप ले लेता है। वह सन्तरे का विचार करेगा तो सन्तरे के आकार का बन जायेगा। यदि श्री कृष्ण के विषय में चिन्तन करेगा तो स्वयं श्री कृष्ण का आकार धारण कर लेगा।

आपको अपने मन को ठीक से प्रशिक्षित करना चाहिए। परिपाक के लिए उसे सात्त्विक आहार ही देना चाहिए। सदा सात्त्विक पृष्ठ-भूमि बनाये रखिए, सात्त्विक विचार और सात्त्विक चित्र ही मन में रखिए।

व्यक्ति दिन-भर जिन विचारों में लीन रहता है, वही विचार रात्रि को स्वप्न-काल में भी आते हैं। यदि आपमें पवित्रता तथा एकाग्रता है तो आप जब चाहें वह भाव अपने मन में ला सकते हैं। यदि आप दया की बात सोचें, तो आपका समूचा अस्तित्व दयानुविद्ध हो उठेगा। शान्ति की बात सोचें तो सारी सत्ता शान्ति से परिव्याप्त हो जायेगी।

मनोभाव ही हमारी कृतियों का स्वरूप निर्धारित करता है और उनका फल निश्चित करता है। आप अपनी माँ, बहन तथा पत्नी—तीनों का आलिंगन कर सकते हैं; क्रिया तो वही है, परन्तु मनोभाव भिन्न-भिन्न हैं।

सदा आप अपनी भावना, अपने विचार और अनुभव का ध्यान रखें। भावना सदा सात्त्विक होनी चाहिए। सदा ब्रह्मभाव रखना चाहिए। ध्यान के समय क्या भावना रहती है, यह देखिए; श्वास-प्रश्वास पर ध्यान देने की आवश्यकता नहीं है।

आप अपने मन में जैसा विचार करेंगे और नित्य-जीवन में जिस प्रकार का आदर्श अपने सामने रखेंगे, वही आपके आज के स्वरूप को तथा भविष्य के स्वरूप को भी बनाने में सहायक होगा। आप निरन्तर कृष्ण का ही चिन्तन करते रहेंगे तो आप कृष्णमय ही बन जायेंगे; उसमें सदा-सर्वदा के लिए एकरूप हो जायेंगे।

३. ईश्वर-सम्बन्धी विचार

आपका मन सभी सांसारिक विचारों से मुक्त होना चाहिए। वह ईश्वर-सम्बन्धी विचारों से ही पूर्ण होना चाहिए, अन्य विषयों से नहीं।

सदा मन को श्रेष्ठ, उदात्त तथा दिव्य विचारों से ही पूर्ण रखिए, जिससे कि कुविचारों के लिए स्थान ही न रहे। एक भी अनावश्यक शब्द न कहिए। मन में कोई अनुपयोगी और व्यर्थ विचार आने न दीजिए।

४. रोग-मुक्ति के लिए ईश्वरीय विचार

समस्त रोगों से मुक्त होने का और अपना स्वास्थ्य ठीक रखने का एकमात्र रामबाण औषध है ईश्वर-विषयक विचारों का चिन्तन। कीर्तन, जप और नित्य ध्यान

के द्वारा मन में जो ईश्वर-सम्बन्धी विचारों की तरंगें उठती हैं, वे शरीर के कोषों, नाड़ियों और शिराओं में तेज भरती हैं, ताजगी देती हैं तथा शक्ति और स्फूर्ति प्रदान करती हैं।

दूसरा एक अत्यन्त सुलभ, सस्ता और समर्थ औषध है सदा प्रसन्न और सन्तुष्ट रहना। प्रतिदिन अर्थ-सहित गीता के एक-दो अध्याय पढ़िए। सांसारिक विचारों से बचने के लिए मन को सदा व्यस्त रखिए। यह भी एक औषध है।

मन को सत्त्वगुण से भर दीजिए और सुन्दर स्वास्थ्य तथा अपार शान्ति भोगिए। ज्ञानियों का सत्संग कीजिए और श्रद्धा, समाधान, सत्य, साहस, दया, भक्ति, प्रेम, प्रसन्नता, विश्वास, ईश्वर-विषयक विचार तथा दिव्य गुणों का विकास कीजिए।

दिव्य मार्ग पर, अध्यात्म की दिशा में दिव्य पगडण्डी पर मन को दौड़ने दीजिए, तब आपका मन शान्त रहेगा और उसके स्पन्दन समाधान निर्माण करेंगे। आपका मनःस्वास्थ्य बढ़िया रहेगा और कोई शारीरिक रोग नहीं होगा।

५. ज्ञान और भक्ति से विचार-संस्कार

किसी एकान्त स्थान में बैठ जाइए और अपने विचारों का सावधानीपूर्वक परीक्षण कीजिए। कुछ समय तक मनमर्कट को स्वेच्छा से उछलने-कूदने दीजिए। कुछ समय पश्चात् वह नीचे उतर आयेगा और शान्त रहेगा। इस आन्तरिक सर्कस में वन्य पशु-रूप विविध विचारों के मात्र साक्षी रहिए। मन के उस सिनेमा के मात्र दर्शक बने रहिए।

विचारों के साथ तादात्म्य स्थापित न कीजिए। उदासीन वृत्ति अपनाइए। एक-एक करके सारे विचार स्वयं नष्ट हो जायेंगे। जैसे युद्ध-क्षेत्र में सैनिक अपने शत्रुओं का एक-एक करके संहार करता जाता है, उसी प्रकार आप भी अपने विचारों को एक-एक करके नष्ट कर सकते हैं।

मन में दोहराते जाइए—'ॐ मैं साक्षी हूँ। मैं कौन हूँ? मैं निर्विचार आत्मा हूँ। इस मानसिक मिथ्या चित्र और विचार से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है। उन्हें अपना काम करने दो। मुझे उससे कुछ भी लेना-देना नहीं है।' इससे सभी विचार नष्ट हो जायेंगे। घृतहीन बत्ती की तरह सारे विचार लुप्त हो जायेंगे।

भगवान् हरि, भगवान् शिव, श्री कृष्ण या आपके अपने गुरु, किसी सन्त—जैसे ईसा मसीह या भगवान् बुद्ध—इनमें से किसी के आकार को अपने मन में स्थिर कीजिए। बार-बार उस मानसिक चित्र को मनःपटल पर उभरने दीजिए। सभी विचार नष्ट हो जायेंगे। यह दूसरी पद्धति है भक्तों की पद्धति।

६. विचार और चित्त-समाधान का योगाभ्यास

शान्ति से बैठिए। विवेचन कीजिए। विचार तथा संकल्प-विकल्प करने वाले तत्त्व मन से अपने को पृथक् कीजिए।

अपने को अन्तर्तम आत्मा के रूप में पहचानिए और स्वयं मूक साक्षी बने रहिए। धीरे-धीरे सभी विचार अपने-आप नष्ट हो जायेंगे। आप परब्रह्म के साथ एकाकार हो जायेंगे।

चित्त-समाधान प्राप्त करने का अभ्यास कीजिए। उसके लिए निश्चय ही, मन को समाप्त करने का सीधा प्रयत्न करना आवश्यक है।

पहले वासनाओं का नाश करना होगा। तभी आप तीव्रता के साथ मानसिक साधना करने में समर्थ होंगे। वासना-क्षय के अभाव में मनःसमाधान या मनोनाश सम्भव नहीं है।

७. योगाभ्यास से मित्र-लाभ

डेल कार्नेगी का एक सिद्धान्त है—'मित्र बनाओ और लोगों को प्रभावित करो'; किन्तु यह सिद्धान्त भारत के चित्त-निरोध-शास्त्र का एक बिन्दु मात्र है। योगाभ्यास कीजिए, सारा संसार आपकी पूजा करेगा। प्रत्येक जीव आपकी ओर अनजाने ही आकृष्ट होगा। देवता तक भी आपके आदेशानुवर्ती रहेंगे। क्रूर और हिंसक जन्तु भी आपके मित्र बनेंगे। सबकी सेवा कीजिए, सबसे प्रेम कीजिए। राजयोग के अभ्यास से, चित्त-निरोध और आत्म-नियमन के द्वारा अपनी अन्तःशक्ति को प्रकट कीजिए।

योगाभ्यास के द्वारा आप सम्पूर्ण मानव-जाति तथा जीवों को अपने परिवार का सदस्य बना सकेंगे। योगाभ्यास से आप सभी कष्टों पर विजय प्राप्त कर सकेंगे और सारी दुर्बलताएँ दूर कर सकेंगे।

योग के बल पर आप दुःख को आनन्द में, मृत्यु को अमरता में, शोक को प्रसन्नता में, पराजय को जय में और रोग को सुन्दर स्वास्थ्य में बदल सकते हैं; इसलिए दृढ़तापूर्वक योगाभ्यास कीजिए।

८. योग की निर्विचारावस्था

साधारणतः विद्यार्थियों में सच्ची आध्यात्मिक जाग्रति नहीं है। योग-शक्ति या मनःशक्ति प्राप्त करना मात्र जिज्ञासा है। सिद्धि के प्रति जब तक यों गुप्त आकांक्षा बनी रहेगी, तब तक ईश्वर आपसे कोसों दूर है; इसलिए जो नैतिक नियम हैं, उन्हीं के अनुसार चलो।

प्रापंचिकता का जो स्वभाव है, पहले उसे दूर करो। यदि आप पूर्णतया निष्काम हो जाओ, निर्विचार बन जाओ, वृत्ति-शून्य हो जाओ, तब बिना विशेष प्रयास के, केवल अन्तःशुद्धि के बल पर कुण्डलिनी जाग्रत हो जायेगी। मन के सारे मैल धो डालो। अपने ही अन्दर से आपको सहायता और मार्ग-दर्शन मिलेगा।

९. उन्नत विचार-शक्ति से सम्पन्न योगी

जिस योगी ने अपनी विचार-शक्ति का विकास कर लिया है उसका व्यक्तित्व बड़ा आकर्षक और प्रभावशाली हो जाता है। उसके सम्पर्क में जो भी आयेंगे वे भी उसकी मधुर आवाज से, प्रभावशाली वाणी से, कान्तियुक्त आँखों से, तेजस्वी चेहरे से, स्वस्थ सुन्दर शरीर से, सद्व्यवहार से, सद्गुणों और दिव्य स्वभाव से मुग्ध होंगे, आकृष्ट होंगे।

उससे लोगों को सुख-शान्ति और बल मिलेगा। उसकी बातों से उन्हें प्रेरणा मिलेगी। उसके सम्पर्क मात्र से उनका चित्त उन्नत होगा।

विचार संचार करता है। विचार एक महाशक्ति है। सच्चा योगी भले ही हिमालय की गुफा में एकान्त में रहता हो, फिर भी वह अपनी विचार-शक्ति से सारे संसार को पवित्र-शुद्ध कर सकता है।

आवश्यक नहीं कि वह सभाओं में जाये और जनता के हित के लिए भाषण-व्याख्यान आदि ही दे। सत्त्वगुण में प्रचण्ड क्रिया-शक्ति भरी है। जो चक्र बड़ी तेजी से घूमता है, वह ऐसा दिखायी देता है कि वह स्तब्ध है, स्थिर है। सत्त्वगुण ऐसा ही है। सात्त्विक मनुष्य की यही स्थिति है।

१०. अनन्त शक्ति के लिए विचार-नौका

जीवन अशुद्धि से शुद्धि की ओर, घृणा से विश्व-प्रेम की ओर, मृत्यु से अमृतत्व की ओर, अपूर्णता से पूर्णता की ओर, दास्य से स्वातन्त्र्य की ओर, विविधता से एकता की ओर, अज्ञान से परम ज्ञान की ओर, दुःख से परमानन्द की ओर एवं दुर्बलता से अनन्त शक्ति की ओर एक प्रवास है।

आपका प्रत्येक विचार आपको ईश्वर के निकट पहुँचाये, प्रत्येक विचार आगामी विकास में सहायक हो !

द्वादश अध्याय

विचार-शक्ति और नयी सभ्यता

१. शुद्ध विचार : विश्व पर उसका प्रभाव

पाश्चात्य मनोविज्ञानवेत्ता और मानसशास्त्री विचार-शुद्धि पर बहुत बल देते हैं। विचार-संस्कार एक शास्त्रीय विज्ञान है। प्रत्येक को शुद्ध विचार करना सीखना चाहिए और हर प्रकार के व्यर्थ अनुपयोगी सांसारिक विचारों को त्याग देना चाहिए।

जो व्यक्ति पापमय विचारों को प्रश्रय देता है, वह अपना तथा समस्त विश्व का अकल्याण करता है। उसके दुष्ट विचार दूर-दूर तक के लोगों के चित्त को भी प्रभावित करते हैं; क्योंकि उनकी गति विद्युत् की भाँति अति-शीघ्रगामी है।

सभी प्रकार के रोगों का प्रत्यक्ष कारण दुष्ट विचार है। सभी रोग अपवित्र विचारों से आरम्भ होते हैं।

जो व्यक्ति उदात्त और दिव्य विचारों को प्रश्रय देता है, वह अपना तथा जगत् का महान् कल्याण करता है। वह सुख, सन्तोष, शान्ति, आशा, विश्वास आदि को अपने मित्रों में, जो दूर भी हों, विकीर्ण करता है।

२. विचार-शक्ति और विश्व-कल्याण

कर्म क्रिया भी है और कार्य-कारण-भाव का सिद्धान्त भी है। मानवेतर सभी प्राणी 'मनोविहीन' हैं; अतः वे विचार नहीं कर सकते। इसके अतिरिक्त वे उचित-अनुचित नहीं जानते, कर्तव्य-अकर्तव्य का भी उन्हें ज्ञान नहीं; अतः वे कर्म नहीं कर सकते। विचार ठोस वस्तु है। वह मिश्री की डली से भी अधिक ठोस है। उसमें अद्भुत शक्ति है। सावधानी के साथ इस शक्ति का उपयोग करें। वह आपकी अनेक प्रकार से रक्षा एवं सेवा करेगी; परन्तु उसका यों ही अपव्यय न करें। यदि आप इसका दुरुपयोग करेंगे, तो आपका शीघ्र ही पतन होगा एवं उसकी बड़ी भयानक प्रतिक्रिया होगी। उसका उपयोग परोपकार में ही करें।

३. प्रेम और पराक्रम की वृद्धि के लिए विचार-शक्ति

भय, स्वार्थ, घृणा, वासना तथा ऐसे ही अन्य घृणित असद्विचारों को निर्ममतापूर्वक नष्ट करें। इन्हीं असद्विचारों के कारण दुर्बलता, रोग, असमाधान, निराशा और निरुत्साह उत्पन्न होते हैं।

दया, साहस, प्रेम, पवित्रता आदि सद्विचारों का विकास करें। असद्विचार स्वयमेव नष्ट हो जायेंगे। इसकी परीक्षा करके देखें कि इससे कितना बल मिलता है। शुद्ध विचारों के कारण आपमें नवजीवन का संचार होगा।

उत्कृष्ट और दिव्य विचार मन पर महान् प्रभाव डालते, असद्विचार को विदूरित करते तथा मनस्तत्त्व को परिवर्तित कर देते हैं। दिव्य विचारों के चिन्तन से मन पूर्णतया आलोकमय हो जाता है।

४. आदर्श जीवन के लिए विचार-शक्ति

उत्कृष्ट विचारों का चिन्तन करें। इससे आपका चारित्र्य उन्नत तथा आपका जीवन आदर्शमय और उत्तम होगा।

परन्तु भिन्न-भिन्न व्यक्तियों की मनोभूमिका भिन्न-भिन्न होती है। मनुष्यों की क्षमता, मानसिक तथा बौद्धिक शक्ति और मानसिक तथा शारीरिक बल अलग-अलग होता है। अतः प्रत्येक व्यक्ति का अपना-अपना आदर्श होना चाहिए जो उसकी मनोवृत्ति के अनुकूल हो, उसकी क्षमता के अनुरूप हो तथा उसको पूर्ण करने में पूरी शक्ति एवं उत्साह से जुट जाना चाहिए।

एक मनुष्य का आदर्श दूसरे के अनुरूप नहीं होता। यदि मनुष्य ऐसा आदर्श रखे कि जिसे वह पूर्ण न कर सके, जो उसकी क्षमता तथा शक्ति से परे हो, तो उसे निराश होना पड़ेगा। वह अपना प्रयत्न छोड़ देगा और तामसी हो जायेगा।

आपका स्वयं अपना आदर्श होना चाहिए। उसे आप तुरन्त प्राप्त कर सकते हैं अथवा लड़खड़ाते पैरों से चल कर दश वर्षों में प्राप्त कर सकते हैं। इसमें कोई विशेष महत्त्व नहीं। प्रत्येक व्यक्ति को अपने आदर्श के अनुरूप जीने का यथाशक्य प्रयत्न करना चाहिए। उस ध्येय को प्राप्त करने के लिए उसे अपना संकल्प, अपना दैहिक बल एवं सारी शक्ति लगा देनी चाहिए।

आप अपने स्तर के अनुरूप अपना आदर्श रख सकते हैं। यदि आप स्वयं इसे करने में असमर्थ हैं तो गुरु की शरण में जायें, वे आपको आपकी क्षमता तथा मापदण्ड के अनुरूप आदर्श बता देंगे।

जिसका आदर्श नीचा हो, उसके प्रति तुच्छ भाव नहीं रखना चाहिए। यह सम्भव है कि नैतिक और आध्यात्मिक मार्ग पर घुटनों के बल चलने वाला वह एक शिशु-आत्मा हो। आपका कर्तव्य है कि उसे उसका ध्येय प्राप्त कराने में अपनी ओर से जो भी सहायता सम्भव हो प्रदान करें। उसकी दृष्टि में जो उन्नत आदर्श है, उसके अनुसार अपना जीवन यापन करने में उसे सब प्रकार से प्रोत्साहित करना चाहिए।

यह दुर्भाग्य का विषय है कि अधिकांश मनुष्यों के जीवन में कोई आदर्श ही नहीं है। यहाँ तक कि सुशिक्षित लोगों में भी यह आदर्शहीनता पायी जाती है। वे निरुद्देश्य जीवन यापन करते हैं और इसी कारण तिनके के समान इधर-उधर भटकते रहते हैं।

वे जीवन में प्रगति नहीं करते। क्या यह शोचनीय स्थिति नहीं है? वास्तव में यह बात बहुत ही खेदजनक है। मानव-जन्म पाना बड़ा ही कठिन है, फिर भी मनुष्य जीवन में आदर्श निश्चित करने एवं तदनुसार जीवन यापन करने के महत्त्व को नहीं समझते।

लोभी एवं धनवान् व्यक्ति प्रायः चार्वाक के 'खाओ, पीयो, मौज उड़ाओ' वाले सिद्धान्त का अनुकरण करते हैं। इस विचारधारा के असंख्य अनुयायी हैं और उनकी संख्या में दिन-दूनी रात-चौगुनी वृद्धि हो रही है।

यह 'विरोचन' का सिद्धान्त है। राक्षसों और असुरों का यह आदर्श है। इसका अनुकरण करने वाला मनुष्य दुःखी और शोक से भरे हुए अन्धकारमय लोक को प्राप्त होता है।

वह मनुष्य धन्य है जो अपने विचारों को उन्नत करता है, आदर्श सामने रख कर चलता है तथा उस आदर्श के अनुरूप जीवन यापन करने का अथक प्रयास करता है; क्योंकि उसे शीघ्र ही ईश्वर-साक्षात्कार हो जायेगा।

५. सेवा और आध्यात्मिक उन्नति के लिए विचार-शक्ति

जिस प्रकार अनर्गल बकवास में शक्ति-क्षय होता है, उसी प्रकार अनुपयोगी विचारों का चिन्तन करने से भी शक्ति का ह्रास होता है। इसलिए एक भी विचार

का दुरुपयोग नहीं करना चाहिए। व्यर्थ विचारों में रंचमात्र शक्ति का भी अपव्यय न करें।

समस्त मनोबल का संचय करें। उसका उपयोग उच्चतर आध्यात्मिक लक्ष्य, ईश्वर-ध्यान, ब्रह्म-चिन्तन एवं ब्रह्म-विचार में करें। विचार-शक्ति का संग्रह करें एवं ध्यान तथा मानव-सेवा में उसका उपयोग करें।

अपने मन से सभी अनावश्यक, निरुपयोगी एवं घृणित विचारों को निकाल दें। अनावश्यक विचार आपकी आध्यात्मिक प्रगति में बाधक हैं और घृणित विचार तो आपके आध्यात्मिक जीवन के कलंक ही हैं।

जब भी निरुपयोगी विचार आपके मन में आयें, तब समझ लें आप भगवान् से अभी बहुत दूर हैं। इसलिए सदा ही ईश्वर-चिन्तन करें। केवल सहायक तथा उपयोगी विचारों का ही चिन्तन करें।

उपयोगी विचार आध्यात्मिक विकास तथा प्रगति के सोपान हैं। पुरानी लीकों में, जहाँ मन के जाने का स्वभाव है वहाँ, उसे भटकने तथा मनमानी न करने दें। सावधानी से निगरानी करें।

६. सद्विचारों से विश्व-कल्याण

प्रत्येक वस्तु अपने समानधर्मा को आकृष्ट करती है। यदि आपके विचार पापमय होंगे तो वह दूसरे लोगों के पापमय विचारों का ही संकलन करेंगे और दूसरों में भी आपके पापमय विचार संचरित होंगे।

विचार संचार करते हैं। विचार एक जीवन्त गतिशील शक्ति है। विचार एक वस्तु है। अपने मस्तिष्क में यदि आप सद्विचारों का चिन्तन करते हैं तो वह दूसरों से भी सद्विचारों को ही ग्रहण करेंगे।

आप अपने सद्विचारों को औरों में भी वितरित करते हैं। आपके असद्विचार विश्व को दूषित कर देंगे।

७. विचार-शक्ति और नयी सभ्यता की स्थिति

विचार व्यक्ति का तथा व्यक्ति सभ्यता का निर्माण करता है। मनुष्य-जीवन में तथा विश्व-इतिहास में प्रत्येक महान् घटना के पीछे अत्यन्त शक्तिशाली विचार-शक्ति पड़ी हुई है।

सभी शोध और अन्वेषणों के पीछे, सभी धर्मों और दर्शनों के पीछे, सभी प्राणदायक और प्राणघातक उपायों के पीछे विचार हैं।

विचार वाणी से अभिव्यक्त होता है और कृति से चरितार्थ होता है। शब्द विचार की धात्री है और कृति उसकी निष्पत्ति है। इसलिए कहा जाता है कि जैसा विचार करेंगे, वैसे बनेंगे।

नयी सभ्यता का निर्माण कैसे हो?

नयी विचार-शक्ति के निर्माण से।

ऐसी सभ्यता का विकास कैसे हो जिसमें मानवता को शान्ति का, समाज को समृद्धि का तथा व्यक्ति को मुक्ति का आश्वासन मिले?

ऐसी नयी विचार-शक्ति को जाग्रत करें जो अनिवार्य रूप से मानव-मन को सुख और शान्ति प्रदान करे, हृदय को करुणा, सेवा, शुश्रूषा, ईश्वर-प्रेम एवं उसके दर्शन की उत्कट अभिलाषा आदि दैवी गुणों से आपूरित करे।

आज विध्वंसक प्रयत्नों और विनाशक प्रवृत्तियों में जितना धन और समय व्यय हो रहा है—उस धन तथा उस समय का अल्पांश भी यदि सद्विचारों के निर्माण में लगाया जाये, तो तत्काल नयी सभ्यता का जन्म हो सकता है।

परमाणु तथा उदजन बम, अन्तर महादेशीय क्षेप्यास्त्र (I.C.B.M) तथा ऐसे ही विध्वंसक शस्त्रास्त्रों की जो नित्य नयी खोज हो रही है, ये सब मानव को अनिवार्य रूप से नाश की ओर ले जा रहे हैं।

वे आपकी सम्पत्ति का नाश कर रहे हैं। आपके पड़ोसियों का संहार कर रहे हैं, संसार के वायुमण्डल को विषाक्त कर रहे हैं, भय, घृणा और संशय का बीज आपके हृदय में बो रहे हैं; मन आज सन्तुलन खो रहा है और शरीर रोग से पीड़ित हो रहा है। इस प्रवृत्ति को बन्द करें।

अध्यात्म में, धर्म में और जीवन के सभी के सभी सत्कार्यों में अन्वेषण का कार्य प्रारम्भ करें। सन्तों और दार्शनिकों का, जो कि मानवता के सच्चे हितैषी और कल्याणकारी हैं, समर्थन करें। उन्हें धर्मों के अध्ययन में, प्राचीन शास्त्र-ग्रन्थों के शोध के लिए कार्य में और विश्व-कल्याण की नयी विचार-शक्ति के निर्माण में प्रोत्साहित करें।

युवकों के मानस को विकृत करने वाले समूचे साहित्य पर प्रतिबन्ध लगायें। युवक-मन को स्वस्थ विचारों, आदर्शों एवं ज्ञान से भर दें।

जो व्यक्ति हत्या करता है, धन चुराता है या दूसरे को धोखा देता है, उसे न्याय दण्ड देता है; परन्तु युवकों के मन में आज विकारमय असद्विचारों को प्रवेश कराने वाले दुष्ट बौद्धिक मनुष्य जो अपराध कर रहे हैं, उसकी तुलना में ये अपराध कुछ नहीं हैं।

वह इस धरती पर होने वाली अनेक हत्याओं का हत्यारा है, वह आपके सर्वोत्तम धर्म, ज्ञान तथा बुद्धि की चोरी करने वाला चोर है; वह अमृत के नाम पर विष दे कर आपको ठग रहा है। नयी सभ्यता के विधान ऐसे आसुरी वृत्ति वाले मनुष्यों को बहुत कड़ा दण्ड देंगे।

नयी सभ्यता उन सभी लोगों को भरपूर प्रोत्साहन देगी जो दर्शन, धर्म और आध्यात्मिक विचारों का अध्ययन करना चाहते हैं। इतना ही नहीं, वह इन विषयों का अध्ययन विद्यालयों तथा महाविद्यालयों में अनिवार्य कर देगी।

दर्शन के विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति मिलेगी। धर्म और दर्शन के शोध-कार्य करने वाले विद्यार्थी को विशेष रूप से पद तथा पुरस्कार प्रदान किये जायेंगे। सबसे महत्त्वपूर्ण मानव की माँग—आध्यात्मिक माँग—की पूर्ति के लिए हर सम्भव अवसर मिलेगा।

नयी सभ्यता के फल बहुमूल्य होंगे; क्योंकि उसके निर्माण में प्रत्येक मनुष्य का योगदान रहेगा। उस सभ्यता में मनुष्य न्याययुक्त जीवन जीना चाहेगा, अपने साथियों की सेवा करने को उत्सुक रहेगा। अपने पास जो है उसे सबको बाँट कर उपभोग करना चाहेगा। वह सबसे प्रेम करेगा, समझेगा कि वही सबमें वास करता है। वह भूत मात्र के कल्याण के लिए अपना सर्वस्व अर्पण कर देगा।

जिस समाज में मनुष्य अपनी वस्तु दूसरे के साथ बाँट कर उपभोग करते हों, परस्पर एक-दूसरे की सेवा में रत हों, वह समाज कितना भव्य होगा; कैसा आदर्श समाज होगा! जब सब-के-सब स्वेच्छा से कार्य करेंगे, वहाँ करों और शुल्कों की आवश्यकता ही कहाँ रहेगी? जब लोग सदाचार-सम्पन्न हो जायेंगे, फिर पुलिस और सेना की क्या आवश्यकता रहेगी?

तो, यह है वह आदर्श! इस ध्येय के प्रति बढ़ने में सहायक हो, ऐसी विचार-शक्ति का निर्माण सब करें।

ईश्वर सबका कल्याण करे!